चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र

Chandamama September '51 Photo by N. Ramakrishna

ओह! कितना भारी है!

चन्दामामा
विषय सूची

कविता :

कहानियाँ :

इनके अलावा

मन बहलाने वाली पहेलियाँ, सुन्दर चित्र और कई प्रकार के तमाशे हैं।

चन्दामामा कार्यालय

पोस्ट बाक्स नं० १६८६

मद्रास-१

उमा बटन्स !

धातु पर सोने का पत्तर ओढ कर बनाए गए हैं। वे मित्र जिन्दगी भर तृप्ति देंगे।

इन चीजों की वी. पी. का दाम सिर्फ १=) होगा। जो लोग चाहें स्पाटलाग मुफ्त मँगा सकते हैं।

उमा गोल्ड कवरिङ्ग वर्क्स

उमा महल :: मछलीपट्टनम

जेबी प्रेस (छापाखाना)
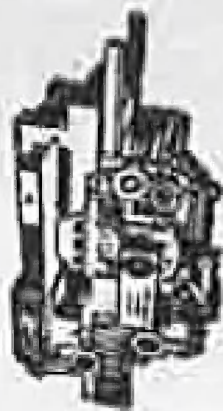
जिसमें अंगरेजी, हिन्दी के समस्त अक्षर, स्याही मुहर बनाने के तरीके, पैड इत्यादि हैं। जिस नाम को छापना चाहो पाँच मिनिट में तैयार हो जायगा मू. ६) डा. खर्च १।) अलग।

इलेक्ट्रिक गाईड।

इस पुस्तक की सहायता से बिना बिजली का रेडियो केवल १५ रु. में तैयार कर सकते हैं तथा बिजली के काम की पूरी जानकारी प्राप्त कर एक कुशल इंजिनियर बन सकते हैं। मू. २॥) डा. खर्च ।॥) पत्र व्यवहार अंग्रेजी में करें।

Address: **SANSAR TRADING CO.**
(C. M. M.) P. O. 21, ALIGARH (U. P.)

अब मिल रहे हैं। अमरीकी मोडल के रोल-फिल्म बाक्स कैमरे, अच्छे पावर-लेन्स और व्यू-फैन्डर लगे हुए सुन्दर सस्ते कैमरे। नौसिखिए भी इनका इस्तेमाल कर सकते हैं। नं. 120 वाले फिल्म पर $2\frac{1}{4}$"x$3\frac{1}{4}$" साइज में सुन्दर फोटो खींचता है। फोटो खींचने के तरीकों के साथ मूल्य साढे दस। डाक-खर्च डेढ रुपया अलग। कैमरे के लिए चमड़े की पेटी साढे तीन रुपए। माल कम है। आज ही आर्डर दीजिए! पत्र-व्यवहार अंग्रेजी में कीजिए!

BENGAL CAMERA HOUSE (108 C.M)
P. O. 21, ALIGARH, U. P.

ग्राहक बनिए !

बहुत से लोग शिकायत करते हैं कि उन्हें एजन्टों से चन्दामामा की कापियाँ नियमित रूप से नहीं मिलतीं। उनके लिए हमारा सुझाव है कि वे तुरन्त चन्दामामा के वार्षिक या द्विवार्षिक ग्राहक बन जायँ। तब उन्हें चन्दामामा की प्रतियाँ नियमित रूप से मिला करेंगी। आज ही लिखिए।

वार्षिक ४॥) द्विवार्षिक ८)

व्यवस्थापक : ग्राहक-विभाग चन्दामामा (हिन्दी) :: १७, आचारप्पन स्ट्रीट, मद्रास-१.

५।।) की पुस्तकें केवल ५) में

निम्नलिखित नाटकों की पुस्तकें विशेष तौर पर बच्चों के लिए ही तैयार की गयी हैं। तमाम पुस्तकों का टाइटिल सुन्दर आकर्षक और दुरंगा है। इन नाटकों को पढ़ते हुए ऐसा मालूम होता है जैसे नाटक सामने ही हो रहा है। यह नाटक आसानी से खेले भी जा सकते हैं। इन्हें एक बार शुरू करके समाप्त किये बिना छोड़ने का मन नहीं चाहता। जो बालक भी इन्हें पावें खुशी के मारे बांसों उछल जायेंगे। इनके नाम यह हैं:—

१. वीर अभिमन्यु, २. वीर हकीकत राय, ३. नेताजी सुभाष चन्द्र बोस, ४. श्रवण कुमार, ५. राजा हरिश्चन्द्र, ६. सत्यवान सावित्री, ७. नल दमयन्ती, ८. दानवीर कर्ण.

उपरोक्त पुस्तकों में से हर एक में ८० पृष्ठ हैं और प्रत्येक का मूल्य ।।।) है। इनका डाक महसूल ।।।) मिला कर ये ७।। की होती हैं। स्टाक बहुत कम है। इसलिए शीघ्र आर्डर दें केवल ५) मनिआर्डर द्वारा भेजिए। पुस्तकें आपके पास पहुँच जायेंगी। आर्डर देते समय अपना पता साफ-साफ अंग्रेजी या हिन्दी में लिखें। आर्डर भेजने का पता यह है:—

RATAN BOOK DEPOT :: POST BOX NO. 102, LUCKNOW (U. P.)

चन्दामामा

संपादक : चक्रपाणी

इस अङ्क से चन्दामामा अपना दूसरा वर्ष समाप्त कर तीसरे वर्ष में पदार्पण कर रहा है। इस मंगलमय अवसर पर हम पाठकों को अपनी हार्दिक शुभ-कामनाएँ समर्पित करते हैं। इन दो वर्षों में चन्दामामा को हर तरह से जो आशातीत सफलता प्राप्त हुई उसका अधिकांश श्रेय पाठकों की सहयोग-भावना को है, इसमें कोई सन्देह नहीं। कागज़ का दाम बढ़ जाने और अन्य कठिनाइयों के कारण हम न पर्वोत्सव विशेषांक ही निकाल सके और न नए आकर्षण ही प्रविष्ट कर सके। लेकिन हमारा यह हमेशा प्रयत्न रहा है कि चन्दामामा का स्तर किसी तरह से नीचा न हो। उसकी सज-धज में कोई कमी न आए। महँगी के होते हुए भी न हमने पृष्ठ ही कम किए हैं और न हमने दाम ही बढ़ाया है। कठिनाइयाँ बढ़ती ही जा रही हैं। लेकिन हमारा विश्वास है कि आपका प्रेम और सहयोग पूर्ववत बना रहेगा। ......

आसान काम

किसी जगह थे बीबी-शौहर ।
रहते आपस में हिल-मिल कर ।
इक दिन होड़ चली दोनों में—
किसका काम कठिन करने में ।

पति ने कहा—'कष्ट क्या सहतीं ?
तुम दिन भर तो बैठी रहतीं !
करतीं तुम जो काम तीन दिन
उसको मैं कर सकता तक्षण ।'

सुन पत्नी ने कहा—'वाह ! तब
करो घरेलू काम-काज सब !
कल मैं स्वयं खेत जाऊँगी ।
मुश्किल क्या है, दिखलाऊँगी !'

खेत गई स्त्री उठ अगले दिन
पति को काम बता प्रमुदित मन—
'गैया को दुह दूध गरम कर
शीघ्र रसोई करनी है फिर ।'

पतिजी गए दूध दुहने को ।
देख गाय ने नौसिखुए को
भड़क, लात ऐसी इक मारी—
सिट्टी-पिट्टी भूली सारी ।

' बैरागी '

'हाय ! हाय !' कह मुँह सहला कर
चले रसोई घर में नश्वर ।
'हाँ, यह तो आसान' सोच कर
फूँक जलाया चूल्हा सत्वर ।

लेकिन साग काटने बैठा—
तो जल्दी में कटा अँगूठा ।
भीगा कपड़ा एक बाँध कर
उस पर, बैठा मुँह लटका कर ।

हाँडी में पानी इतने में
उबल गया तो उठ कर धीमे
चावल डाले उसने धोकर ।
भात पक गया कुछ क्षण में फिर ।

हाँडी चूल्हे से उतार कर
नीचे धरने चला पकड़ कर ।
खाली हाथ जल गए ज्यों ही
हाँडी गिर कर फूटी त्यों ही ।

पत्नी ने जब देखा आकर
बिखरी पड़ी रसोई भू पर ।
पूछा—'सहल काम क्या घर का ?'
पति चुपके से बाहर खिसका ।

पुरुषोत्तम क्षेत्र

मालव देश में एक राजा था। उसका नाम था पुरुषोत्तम। राजा का हृदय बहुत ही कोमल था। वह अपनी सन्तान की तरह प्रजा का पालन करता था। उसके सद्गुणों से प्रसन्न होकर प्रजा सचमुच ही उसे पुरुषोत्तम मानने लगी। पुरुषोत्तम का अर्थ तुम जानते ही हो। जो मनुष्य सबसे उत्तम याने अच्छा हो वही ही पुरुषोत्तम कहा जाता है।

एक बार पुरुषोत्तम ने सोचा कि देश के सभी तीर्थों का दर्शन कर आना चाहिए। इस विचार से उसने अपना राज मंत्रियों को सौंप दिया और पुरोहित को साथ लेकर तीर्थ-यात्रा करने निकल पड़ा। सभी सुप्रसिद्ध तीर्थों के दर्शन करते हुए वे एक विचित्र प्रदेश में आ पहुँचे। उस देश में मकान-ही-मकान थे। लेकिन उनमें रहने वालों का कहीं पता न था। एक जगह एक बहुत बड़ा बड़ का पेड़ था जो कई कोसों तक फैला हुआ था। उस पेड़ के पास एक सुन्दर मंदिर बना था। पुरुषोत्तम ने उस मंदिर का द्वार खुलवाया। मालूम हुआ कि बरसों से वहाँ पूजा-अर्चा नहीं हुई थी। आश्चर्य-चकित होकर उसने मंदिर के चारों ओर घूम-घूम कर देखा। लेकिन उसे मूर्ति कहीं नहीं दीख पड़ी।

सच बात तो यह थी कि उस मंदिर में भगवान की मूर्ति थी ही नहीं। इससे उसे और भी अचरज हुआ। पुरुषोत्तम के मन में अनेक सन्देह पैदा हुए। उसने सोचा—"इस मंदिर में देवता क्यों नहीं हैं! मकानों में रहने वाले कहाँ गए!" लेकिन उस निर्जन प्रदेश में वह किससे पूछे! अपने सन्देह कैसे दूर करे! यों सोचता वह एक पागल की तरह वहाँ बैठा था कि इतने में एक बूढ़ा उधर से आता दिखाई दिया। उसे देख कर

वह बहुत खुश हुआ और बोला—"दादा! तुम किस गाँव में रहते हो? यह जगह इतनी सुनसान क्यों है? यह मंदिर ऐसा क्यों है? इसमें मूर्ति क्यों नहीं है?"

पुरुषोत्तम की बात सुन कर बूढ़े ने कहा—"बेटा! अगर मैं यहाँ की सारी कहानी तुम्हें सुनाने लग जाऊँ तो बहुत देर हो जाएगी। इससे मेरा भी हर्ज होगा और तुम्हारा भी। इसके सिवा मेरे मन में भी यही संशय है। इसलिए भाई, तुम और किसी को ढूँढो।"

उसकी बातें सुन कर पुरुषोत्तम के मन की जिज्ञासा और भी बढ़ गई। उसने बूढ़े से बहुत तरह से कहा-सुना।

आखिर बूढ़ा उसकी बात मान गया और कहने लगा—"बेटा! तुम्हारा मुँह देखने से मालूम होता है कि तुम किसी ऊँचे घराने के आदमी हो। इसलिए मैं बड़ी खुशी से यहाँ की कहानी तुम्हें सुनाऊँगा। अच्छा तो सुनो! कभी इस क्षेत्र की बड़ी भारी महिमा थी। जो इस बरगद के नीचे रहता था उसके सब पाप दूर हो जाते थे और वह सब तरह की संपदा प्राप्त करते थे। देखो, वहाँ एक तालाब है न? कहा जाता है कि उस तालाब में कभी परियाँ नहाया करती थीं। वहाँ बैठ कर तप करने से भगवान विष्णु बहुत शीघ्र प्रसन्न हो जाते थे। उसके उत्तर में ठाकुर-द्वारा है। वहाँ भगवान के दर्शन करने से स्वर्ग मिल जाता था। एक बार इस महा-महिम प्रदेश में एक विचित्र बात हुई। मैं उस समय हर रोज़ की तरह मंदिर में बैठा हुआ था कि मुझे बड़े ज़ोर की नींद आई और मैं लेट गया। नींद में मैंने एक सपना देखा। सपने में नारद मुनि आए और बोले—"गुरुवर! इस पुण्य-देश में अब एक बड़ा भारी परिवर्तन होने वाला है। वजह यह है कि स्वर्ग में ब्रह्माजी से यह

सवाल किया गया है कि अगर सब लोग स्वर्ग ही पाने लगें तो फिर नरक की क्या ज़रूरत है! ब्रमाजी इस सवाल का कोई जवाब न दे सके। इसलिए वे सीधे विष्णु के पास गए।

विष्णु ने सब कुछ सुन कर कहा— "अच्छा जाइए! मैं इसका कोई उपाय सोचूँगा।" बात यहीं तक आ गई है। तुम भक्त आदमी हो। इसलिए मैं यह रहस्य तुमसे बता रहा हूँ।" यह कह कर नारद अदृश्य हो गए।

तुरन्त मैंने आस-पास के लोगों से जाकर अपने स्वप्न की बात कह सुनाई। हम सब मिल कर मंदिर में गए और देखा तो मूर्ति लापता। यह देख कर सब लोग आश्चर्य में डूब गए। मेरे सपने में नारद ने जो कहा, वह इस तरह सत्य साबित हुआ। दूसरे दिन नारद मुझे फिर सपने में दर्शन देकर बोले—"गुरुवर! आप कुछ सोच न कीजिए! मैं आपको एक उपाय बताता हूँ जिससे भगवान फिर इस मंदिर में वास करने आ जाएँगे। अगर कोई ऐसा भक्त हो जिसका भगवान में अचंचल विश्वास हो तो वह तड़के उठे। अकेले पूरब की ओर देखते चलता चले। यों जाने पर मंदिर के निकट का सरोवर एक भयंकर समुन्दर बन जाएगा। उसमें आकाश को चूमने वाली उत्तुङ्ग तरंगें उठ कर भयंकर शब्द करने लगेंगी। लेकिन यह देख कर वह भक्त बिल्कुल न डरे और उस सागर में साहस के साथ कूद पड़े। बीच सागर में उसे एक पीपल का पेड़ दिखाई देगा। अगर वह उसकी एक डाल तोड़ ले तो भगवान प्रत्यक्ष होंगे और उसकी सारी इच्छाएँ पूरी कर देंगे। यही एक उपाय है" यह कह कर नारद अदृश्य हो गए।"

यह वृत्तांत सुनते ही पुरुषोत्तम के मन म

हलचल मच गई। उसने कहा—"दादा! मैं अभी जाता हूँ। अनेकों कष्ट झेल कर भगवान को प्रसन्न करूँगा। जब तक वे प्रसन्न होकर फिर इस मंदिर में प्रवेश न करेंगे तब तक मैं अन्न-जल तक नहीं छूऊँगा।" पुरुषोत्तम ने प्रतिज्ञा की।

इस पर बूढ़े ने कहा—"बेटा! बहुत से लोगों ने तुम्हारी ही तरह प्रतिज्ञा की थी। लेकिन सब के सब उस भयंकर दृश्य को देख कर डर गए और लौट आए। मैंने भी वहाँ जाने की कोशिश की थी। लेकिन बुढ़ापे के कारण कुछ न हो सका। तब हार कर मैंने नई मूर्तियाँ लाकर इस मंदिर में प्रतिष्ठित करने की कोशिश की। लेकिन सभी मूर्तियाँ अदृश्य हो गईं। एक भी मंदिर में न टिकी। यह देख कर यहाँ के लोगों ने सोचा कि अब यहाँ रहने से हमारी कुशल नहीं और सब लोग एक-एक करके ये मकान छोड़ कर दूसरी जगह जा बसे। उनको हमने बहुत समझाया, पर कुछ फ़ायदा न हुआ। आखिर मैंने सोचा कि एक-न-एक दिन कोई वीर यहाँ आएगा और मंदिर में फिर से मूर्ति की प्रतिष्ठा होगी। इसी आशा से मैं यहाँ रह गया। कहो, अगर मैं यहाँ न रहता तो तुम्हें यह सारा वृत्तांत कैसे मालूम होता!" बूढ़े ने अपनी कहानी इस तरह खतम की।
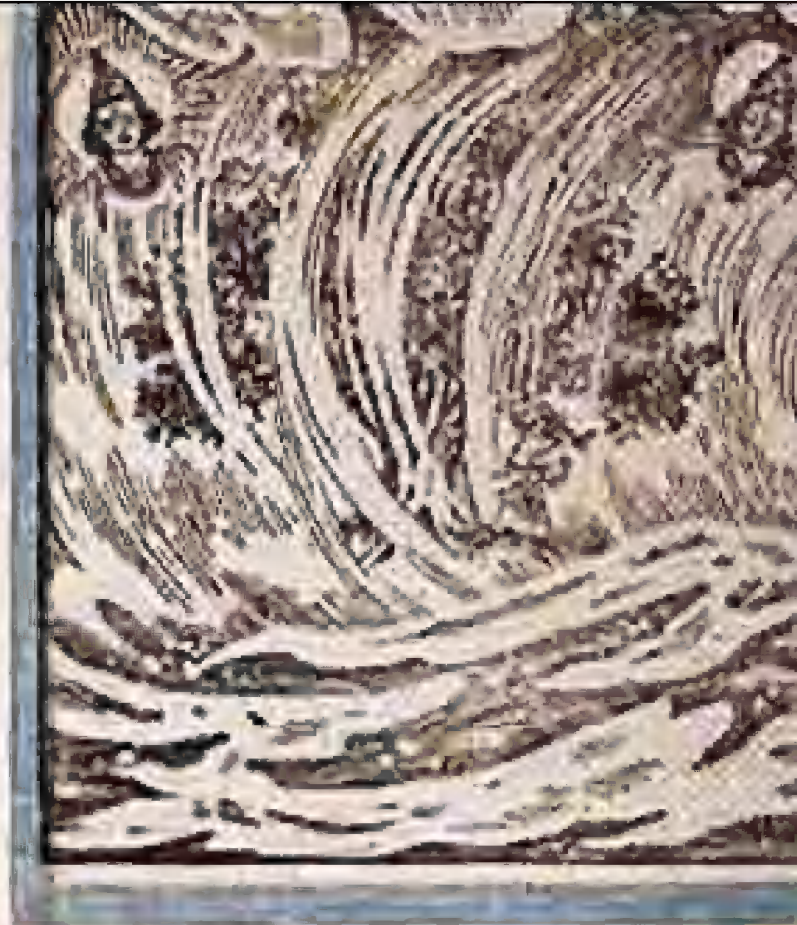
यह सुन कर पुरुषोत्तम और भी जल्दी करने लगा। तब बूढ़े ने एक कुल्हाड़ी लाकर उसे दी और आशीर्वाद देकर उसे विदा किया। कुल्हाड़ी कन्धे पर रख कर पुरुषोत्तम वहाँ से निकला। थोड़ी देर में सरोवर उसकी आँखों से ओझल हो गया। उसके बदले गरजता हुआ भयंकर सागर दिखाई दिया। उन ऊँची तरंगों के बीच एक पीपल का पेड़ भी दिखाई दिया। पुरुषोत्तम भगवान का नाम लेकर लहरों में कूद पड़ा और डूबता-

हुआ पीपल के पेड़ के पास पहुँच गया। वहाँ पहुँचते ही उसने कुल्हाड़ी उठाई।

इतने में सूर्य और चन्द्र के समान तेज वाले दो दिव्य-पुरुष प्रत्यक्ष हुए और डाँट कर बोले—"तुम कौन हो? क्या चाहते हो? इस महावृक्ष की डाली को क्यों काट रहे हो?"

पुरुषोत्तम ने साहस के साथ सारी कहानी सुनाई। यह सुन एक ने कहा—"बस! मैं तुम्हारी दीक्षा और भक्ति देख कर बहुत खुश हूँ। देखो! मेरा साथी एक बहुत बड़ा शिल्पी है। तुम जैसी मूर्ति चाहते हो उसे बनाने में यह ही समर्थ है।" यह कह कर वह अन्तर्धान हो गया। पुरुषोत्तम के देखते ही उस दूसरे पुरुष ने उसकी काटी हुई डाली से तीन सुंदर मूर्तियाँ बना दीं और कहा—"भक्तवर! ये तीनों मूर्तियाँ भगवान कृष्ण, बलराम और सुभद्रा की हैं। इससे तुम्हारा काम चल जाएगा।" यह कह कर वह भी अदृश्य हो गया।

पुरुषोत्तम उन मूर्तियों की प्रार्थना करने लगा। तब कृष्ण अपने निज रूप में प्रत्यक्ष हुए और बोले—"पुरुषोत्तम! मैं तुम्हारी दीक्षा से बहुत प्रसन्न हूँ! जाओ! यह क्षेत्र अब तुम्हारे नाम से प्रसिद्ध होगा और उस बड़ से नैऋति दिशा के मण्डप में मेरा आवाहन करेगा और आषाढ़ मास के शुक्लपक्ष में पंचमी तिथि को, मख नक्षत्र में जो सात दिन तक दीक्षा के साथ मेरी पूजा करेगा, उसका पुनर्जन्म न होगा। तुम दस हजार नौ सौ साल तक राज करके अन्त में मुझ में लीन हो जाओगे।" यह कह कर भगवान अदृश्य हो गए।

पुरुषोत्तम ने बड़ी धूम-धाम से उन तीनों मूर्तियों को मंदिर में प्रतिष्ठित किया। सरोवर पहले जैसा हो गया। सभी लोग फिर वहाँ आकर बसने लगे। उस दिन से हमारे देश के पुण्य क्षेत्रों में पुरुषोत्तमपुरी का नाम परम प्रसिद्ध हो गया।

4

[राजा का सुहासिनी को साथ लेकर सुरंग की राह आना, इतने में दासी का आना, राह भूल जाने पर राजा का उनको छोड़ कर लौट जाना, उन दोनों का गायब हो जाना और राजा का सुरंग में ही भटकते रहना, इत्यादि आपने पिछले अंक में पढ़ लिया। अब आगे पढ़िए।]

इतने में उसे एक जगह एक दरवाजा दिखाई दिया। वहाँ दासी और सुहासिनी को खड़े देख कर राजा की जान में जान आई। उस दरवाजे के अंदर जाने पर वे तीनों सुहासिनी के कमरे में पहुँच गए। अंदर जाने पर मालूम हुआ कि सुहासिनी के सारे कमरे में दीवारों और छत पर भी आइने लगे हुए थे। उन आइनों में एक तो बड़ा अजीब था। जमीन पर एक बटन लगा हुआ था। उसको दबाने पर वह आइना जमीन के अंदर धँस जाता था और उस जगह एक दरवाजा दिखाई देने लगता था। उस दरवाजे से जाने पर सुरंग की राह दिखाई देती थी। उस दरवाजे के बाहर भी एक बटन लगा हुआ था जिसे दबाने पर वह आइना ऊपर आ जाता और वह दरवाजा बंद हो जाता था। इस तरह उस दरवाजे को खोलने और बंद करने के लिए भी बटन लगे हुए थे।

अब प्रश्न यह था कि सुहासिनी राजा के कमरे में कैसे पहुँच गई। वह रोज की तरह दासी के साथ पलंग पर सो रही थी।

लेकिन रात में अचानक उसकी नींद खुल गई। जब वह उठ कर कमरे में इधर-उधर टहलने लगी तो उसका पैर दरवाजा खोलने वाले बटन पर पड़ गया।

तुरंत आइना ज़मीन में धंस गया और उस जगह एक दरवाजा निकल आया। यह देख कर सुहासिनी उस दरवाजे से बाहर निकली और चलते-चलते राजा के सोने के कमरे में की तस्वीर के नीचे पहुँच गई। वहाँ अँधेरा था। इसलिए सुहासिनी को मालूम नहीं हुआ कि सुरंग वहीं तक है और आगे पैर बढ़ाने से वह तस्वीर से टकराएगी। ज्यों ही उसने पैर आगे बढ़ाए कि वह तस्वीर से टकरा गई।

टकराते ही तस्वीर कुछ हटी और उसको राजा पलँग पर सोया हुआ दिखाई दिया। पिता के पास जाने की इच्छा से सुहासिनी ने बड़ी कोशिश से उस तस्वीर को सरका कर घुसने का रास्ता बना लिया और घुस कर राजा के पास पहुँच गई। उसके बाद राजा कैसे सुरंग में भटकने लगा सो तो आप जानते ही हैं।

इस तरह उस विचित्र सुरंग के गुप्त-मार्ग की बात जान कर राजा को बहुत हर्ष हुआ और साथ साथ डर भी लगा।

राजा इतने दिन तक बड़ी मुश्किल से सब की आँख बचा कर बाग़ की राह से सुरंग में आता जाता था। लेकिन अब उसके लिए उस राह से जाने की कोई ज़रूरत न थी। अब उसे डर न था कि कोई देख लेगा। वह अब मन होने पर अपने कमरे से इस सुरंग की राह जाकर लड़कियों को देख सकता था और यह किसी को मालूम भी न होता। इसलिए राजा को बहुत हर्ष हुआ।

साथ ही डर लगने का कारण यह था कि ठीक बंदोबस्त न करने पर आगे सुहासिनी और उसकी दूसरी लड़कियाँ भी सुरंग की राह उसके कमरे में पहुँच जाएँगी और वहाँ से बाहर महल में चली जाएँगी। तब तो उसका किया-कराया सब मिट्टी में मिल जाएगा और लड़कियाँ आफ़त में पड़ जाएँगी। इसलिए अब राजा सोचने लगा कि किस उपाय से वह इस ओर से निश्चिंत हो जाए। अंत में उसे एक अच्छा उपाय सूझ गया।

इसके पहले उसने अपनी तीनों लड़कियों को तीन अलग अलग कमरों में रख कर तीन दासियों को अलग अलग उनकी देख-भाल करने का आदेश दिया था। लेकिन अब सुहासिनी को उस कमरे में रखने से खतरा था। इसलिए राजा ने उस कमरे को खाली करने का निश्चय कर लिया। उसने दासियों से कह दिया कि तीनों लड़कियों को दो ही कमरों में रहने दो। दासियों ने ऐसा ही किया।

तब जाकर राजा निश्चिंत हुआ। वह थोड़ी देर तक अपनी तीनों लड़कियों से बातें करके सुहासिनी के आइनों वाले कमरे में गया। बटन दबाते ही आइना जमीन में धँस गया और रास्ता निकल आया। उस राह से सुरंग में आकर राजा ने बाहर का बटन जो दबाया तो फिर दरवाजा बंद हो गया। इस गुप्त-मार्ग का पता पा जाने से उसके मन की चिंता दूर हो गई। उसने मन ही मन भगवान को धन्यवाद दिया और खुशी खुशी अपने कमरे में लौट आया।

* * *

उस दिन से निश्चिंत होकर राजा दिन में कई बार आने जाने लगा। धीरे धीरे दिन बीतते गए। जब-जब राजा अपनी लड़कियों को देखने आता तो उसकी तीनों लड़कियाँ बड़े ही दीन स्वर में कहतीं—"पिताजी! हमें भी अपने साथ महल में ले चलिए न!"

लेकिन राजा हँस कर उनकी बात टाल देता था। वह प्यार से कहता—"बिटिया! अभी नहीं; फिर कभी ले चलूँगा।"

इस तरह कई महीने बीत गए। राजा को बड़ा आनंद हुआ कि उसकी तीनों लड़कियाँ सुरक्षित हो गईं।

लेकिन उधर रानी दिन-दिन चिंता में घुली जा रही थी। जो सिपाही लड़कियों की खोज में गए हुए थे, वे अपना-सा मुँह लिए लौट आए। अब रानी अक्सर ज्योतिषी को बुला कर पूछा करती—"मेरी लड़कियाँ कुशल से हैं?"

"उनके लिए आप कुछ भी फिक्र न कीजिए। मुझे पोथी-पत्रों से मालूम होता है कि वे सभी थोड़े दिनों में सकुशल लौट

आवेंगी।" इस तरह ज्योतिषी उसे धीरज बँधाता।

इससे रानी को संतोष होता और कुछ दिन तक उसकी चिंता ज़रा घट जाती। इस तरह दो साल बीत गए।

राजा रोज़ सुरंग में जाकर अपनी तीनों लड़कियों को देख आता था। उसकी तीनों लड़कियाँ सुरक्षित थीं। लेकिन राजा को देखते ही वे हल्ला मचाने लगतीं—"हमें भी अपने साथ लेते चलिए! हमें यहाँ क्यों छोड़े जाते हैं? माँ को देखे कितने दिन हो गए! हमें माँ के पास क्यों नहीं ले जाते हैं?" यों कह कर वे सब रोने लगतीं और अधीर होकर पिता के पैरों से लिपट जाती थीं।

उनको इस तरह व्याकुल होते देख कर राजा का कलेजा टूक-टूक हो जाता था। वह सोचने लगता था—"क्यों न इन्हें एक बार माँ से मिला दूँ! इसमें हर्ज क्या है? डर तो कुछ है नहीं।" लेकिन उसे ऐसा करने का साहस न होता था। वह निश्चय कर लेता—"चाहे कुछ भी हो, और एक

साल तक मुझे यह सब बर्दाश्त करना ही होगा।" इसलिए लड़कियों के बहुत रोने-धोने पर भी वह उन्हें किसी न किसी तरह राजी कर लेता। मगर अपने साथ न ले जाता।

और कुछ महीने बीत गए। यहाँ तक कि ज्योतिषी के कहे मुताबिक सात साल की अवधि पूरी होने पर आई। सिर्फ पाँच-छः रोज़ में लड़कियाँ सात साल की हो जातीं और उनके ऊपर से दुष्ट-ग्रहों का प्रभाव दूर हो जाता। तब वे खुशी-खुशी सुरंग से बाहर आ जातीं।

"तीन साल तो बीतने को आए। मैं इस सुरंग के कारण लड़कियों की रक्षा कर सका। अब और क्या है! चार-पाँच दिनों में तो सात साल पूरे हो ही जाते हैं। तब मेरी लड़कियों के ऊपर कोई संकट न आएगा।" राजा ने अपने मन में सोचा।

रोज़ की ही तरह एक दिन राजा सुरंग के रास्ते लड़कियों को देखने आया। वह दिन सात साल की अवधि का आखरी दिन था। दूसरे दिन वे लड़कियाँ सुरंग से बाहर आ जातीं। हाँ, उस दिन राजा को देखते ही लड़कियाँ उसके पैरों से लिपट गईं और रोकर कहने लगीं—"आज अपने साथ हमको भी ले चलिए।"

उनका हठ देख कर राजा का मन पानी-पानी हो गया। "तीन साल तो करीब-करीब बीत ही गए। सिर्फ चौबीस घंटे की बात है। इतने में ही इन पर कौन सी आफत आ जाएगी! नौकर-चाकर तो चारों ओर पहरा देते ही रहेंगे।" यह सोच कर राजा ने मन में साहस किया। वह तीनों लड़कियों को सौ नौकरों और तीन दासियों के साथ सुरंग से बाहर बाग में ले आया। दासियाँ उन्हें घेरे खड़ी थीं और राजा खुद नजदीक ही खड़ा था। इतने दिनों बाद बाहरी दुनियाँ में आकर लड़कियों की खुशी का ठिकाना न रहा। वे बाग में उछलती-कूदती खेलने लगीं। यह देख कर राजा का हृदय आनंद से भर गया।

इतने में कहीं से एक बड़ा भारी बवंडर उठा। देखते-देखते सारा बाग धूल से भर गया। उस धूल-झक्कड़ में थोड़ी देर के लिए सबों की आँखें बंद हो गईं। जब उन लोगों की आँखें खुलीं तो देखा कि लड़कियाँ आकाश में उड़ी जा रही हैं। तीन गीध

इन्हें उठाए चले जा रहे हैं। यह देखते ही राजा चिल्ला कर बेहोश हो गया।

दासियाँ राजा की सेवा करने लगीं। नौकर उड़ते हुए गीधों के पीछे दौड़े।

जब राजा को होश आया और उसकी आँखें खुलीं, तब उसने पूछा—"नौकर कहाँ हैं?"

इतने में एक-एक करके सभी नौकर मुँह लटकाए लौट आए। ठीक आज से तीन साल पहले राजा ने जो मन-गढ़ंत कहानी रानी से कही थी, वह अक्षरशः पूरी हो गई। यह देख कर राजा के कलेजे पर छुरी चल गई। उसने सोचा—"आज यह दुर्घटना होने ही वाली थी। इसलिए उस दिन मेरे मुँह से वे बातें निकल पड़ी थीं। बड़ों का कहना भी है कि होनहार को कोई रोक नहीं सकता।" राजा सिर पीट-पीट कर रोने लगा।

लेकिन जो होना था सो तो हो ही गया। सचमुच किसी दुष्ट-ग्रह की प्रेरणा से ही उस दिन राजा अपने निश्चय से डिग गया और लड़कियों को अवधि पूरी होने के पहले ही बाहर ले आया। "अब पछताए होत क्या, चिड़ियाँ चुग गईं खेत!"

अब रानी से यह बात छिपाने से क्या फायदा था! इसलिए राजा ने नौकर-चाकरों के साथ महल में जाकर बड़ी हिचकिचाहट के साथ रानी से सारी कहानी कह सुनाई। दोनों के शोक का अब कोई ठिकाना न था।

[यह भयंकर समाचार सुन कर रानी की क्या हालत हुई? गीधों के द्वारा उड़ाए जाने के बाद उन मासूम बच्चियों का क्या हाल हुआ? आदि बातें अगले अंक में पढ़िए!]

क्षमा-दान

पुराने ज़माने में वारणावत नामक नगर में ब्रह्मदत्त नामक राजा राज करता था। वह बड़ा बलवान था। उसे दूसरे राज्यों को जीतने की बड़ी इच्छा रहती थी। उसने बहुत से छोटे-छोटे राज्यों पर चढ़ाई करके उन्हें अपने राज में मिला लिया था। तो भी उसे संतोष न हुआ।

एक बार उसने अपने निकट के छोटे से कोसल-राज पर चढ़ाई करके आसानी से उस पर कब्ज़ा कर लिया।

कोसल राज्य का राजा था दीर्घहेति। वह छोटा सा राजा था। शत्रु बड़ा बलवान था। फिर वह कर क्या सकता! वह अपनी गर्भवती स्त्री के साथ निकल भागा और भेस बदल कर एक गरीब के घर में गुज़र करने लगा।

ब्रह्मदत्त ने कोसल-राज को जीत तो लिया। लेकिन उसे आनंद न हुआ। क्योंकि दीर्घहेति अन्य राजाओं की तरह कायर न था। इसलिए उसने उसकी अधीनता स्वीकार न की। उसने सोचा—"शत्रु-शेष और ऋण-शेष न रहने देना चाहिए। दीर्घहेति को खोज कर मार ही डालना चाहिए।" यह निश्चय करके उसने चारों ओर अपने गुप्तचरों को उसका पता लगाने के लिए भेज दिया।

उधर गरीब के घर में रहते दीर्घहेति की स्त्री के एक पुत्र पैदा हुआ। तब दीर्घहेति ने कहा—"अभी हमारे कष्ट के दिन हैं। भगवान हमारी परीक्षा ले रहा है। हम कभी न कभी ज़रूर पकड़े जाएँगे। इसलिए हमें किसी न किसी तरह इस बच्चे की जान बचानी चाहिए।" यह कह कर दीर्घहेति ने बच्चे का नाम दीर्घायु रखा और वहाँ से दूर पर एक ब्राह्मण के घर में उसे सौंप दिया। लड़के से विदा होते वक्त उसने अपनी तलवार भी वहीं छोड़ दी और कहा—"दीर्घायु के बड़े होने पर यह तलवार उसे दे दो।"

स्वरूप कुमार

लेकिन तुम्हें संतोष न हुआ। तुमने हमें पकड़ मँगाया। अब अगर चाहो तो हमारी जान भी ले सकते हो। लेकिन उस मासूम बच्चे का पता तुम हमसे नहीं पा सकते। उसने तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ा है।"

"तुम्हारी जान लेने से मेरा खटका नहीं मिटेगा। मैं तुम्हारे वंश को निर्मूल करना चाहता हूँ। तुम अपने बच्चे का पता बता दो तो मैं तुम दोनों की जान छोड़ दूँगा।" ब्रह्मदत्त ने कहा।

"तुम जो चाहो करो! लेकिन मैं बच्चे का पता नहीं बताऊँगा।" दीर्घहेति ने कहा।

दीर्घहेति को बहुत कष्ट दिए गए। लेकिन उसने बच्चे का पता नहीं बताया। आखिर उन दोनों को मार डाला गया।

दीर्घहेति ने जो सोचा था वही हुआ। कुछ दिन बाद ब्रह्मदत्त के गुप्तचरों ने उसका पता लगा लिया और वह अपनी पत्नी सहित पकड़ा गया। "तुम्हारा पुत्र कहाँ है?" उससे पूछा गया।

"मैं नहीं बताता।" दीर्घहेति ने कहा।

"अच्छा देखता हूँ न कि कैसे नहीं बताते हो! ले चलो इसे राजा के पास।" सिपाहियों के सरदार ने कहा। वे उसे पकड़ ले गए। उन्हें देखते ही ब्रह्मदत्त ने पूछा—"बच्चा कहाँ है?"

तब दीर्घहेति ने कहा—"तुम मेरा राज्य चाहते थे। वह तो तुमने ले ही लिया।

दूर ब्राह्मण के घर में गुप्त-रूप से पलते हुए दीर्घायु को अपने माता-पिता के मरने का हाल मालूम हुआ। बस, उस दिन से उसका हृदय ब्रह्मदत्त से बदला लेने के लिए छटपटाने लगा।

इधर ब्रह्मदत्त भी उस लड़के का स्मरण करके मन ही मन चिंता में घुलने लगा।

दीर्घायु ने अपना नाम भी बदल लिया और इस तरह से बरतने लगा कि कोई उसे पहचान न पाए। धीरे से उसने ब्रह्मदत्त के

राज्य में प्रवेश किया और उसके अस्तबल में नौकरी कर ली। कुछ ही दिनों में अपनी विनय, चतुरता आदि गुणों से उसने राजा ब्रह्मदत्त का ध्यान भी अपनी ओर आकर्षित कर लिया। उससे सब खुश रहने थे। कुछ दिन बाद ब्रह्मदत्त ने उससे खुश होकर अपने अंग-रक्षक का पद उसे दे दिया। इतना ही नहीं। उस दिन से वह दीर्घायु को छोड़ कर एक मिनट भी नहीं रह सकता था। वह उसका प्राण-मित्र बन गया। दोनों में गहरी छनने लगी।

एक बार राजा दीर्घायु को साथ लेकर शिकार खेलने गया। सिपाहियों को पीछे छोड़ कर दोनों आगे निकल गए। इस तरह बहुत देर तक घूमने के बाद राजा थक गया और दीर्घायु की जाँघ पर सर टेक कर गाढ़ी नींद में डूब गया।

ब्रह्मदत्त को इस तरह सोते देख कर दीर्घायु के मन में अनेकों विचार उठने लगे। उसने सोचा—'इसी पापी ने मेरे पिता का राज्य छीन लिया। इतना ही नहीं, इसने मेरे निर्दोष माता-पिता को मरवा डाला। ऐसे पापी को जो भी दण्ड दिया जाए थोड़ा ही है। इसको मारने से बहुत ही पुण्य होगा। माता पृथ्वी की छाती पर से बड़ा भार हट जाएगा। अनेकों छोटे छोटे राजा मन ही मन मुझे आशीष देंगे। लोगों का तो भला होगा ही। इसको मार डालना चाहिए। इसे दण्ड देने में देरी नहीं करनी चाहिए।" यह सोच कर उसे जोश आ गया। उसने बिजली की तरह अपनी तलवार म्यान से बाहर निकाल ली। लेकिन अचानक उसे एक छोटा सा दोहा याद आ गया जो उसके बचपन में पिता अकसर गाया करते थे—"छिमा बड़न को चाहिए, छोटन को उतपात। का रहीम हरि को घटो जो भृगु मारी लात।" तुरंत उसने तलवार म्यान में रख ली।

इतने में राजा चौंक कर जाग गया और डर से काँपता उठ बैठा।

तब दीर्घायु ने ब्रह्मदत्त से पूछा—"क्या हुआ हुजूर !" तब ब्रह्मदत्त ने कहा-"मित्र ! मेरे जीवन पर दुश्चिंता की छाप पड़ गई है। मैंने एक राजा को मरवा डाला। उस राजा का एक लड़का अभी जीता है। उसका नाम दीर्घायु है। वह मुझसे बदला लेने की होड़ लगाए होगा। इसी चिंता से बहुत दिनों से मैं घुला जा रहा हूँ। नींद में भी उस लड़के के बारे में सपना देखता हूँ। कभी कभी तो ऐसा मालूम होता है कि वह एक लंबी तलवार लेकर मुझे मारने आ रहा है। ऐसा ही एक सपना अभी मैंने देखा। इसी से अचानक नींद टूट गई।" इस तरह उसने पूरी कहानी सुनाई और अपना अपराध स्वीकार कर लिया।

"महाराज !" दीर्घायु ने पुकारा। ब्रह्मदत्त ने सिर उठा कर देखा। तब दीर्घायु ने तलवार म्यान से निकाल कर कहा—"मैं ही वह दीर्घायु हूँ जिसके मारे तुम्हारी आँखों की नींद हराम हो गई है। तुम्हारे पापों का दण्ड देने के लिए ही मैंने तुम्हारे दरबार में नौकरी कर ली। आज मुझे मौका मिल गया। अभी तुम्हारी जान मेरे हाथ में है। चाहूँ तो मैं अभी तुम्हें यम के घर पहुँचा सकता हूँ। लेकिन नहीं, मुझे एक दोहा याद आ गया जो मेरे पिताजी अक्सर पढ़ा करते थे। इसी से मैं तुम्हें क्षमा कर देता हूँ ! जाओ ! उस दोहे के कारण तुम्हारी जान बच गई। आज से तुम्हें मेरी तरफ से कोई खतरा न रहेगा। मैं वादा करता हूँ !" यह कह कर दीर्घायु ने राजा को अपनी तलवार दिखा दी जिस पर दीर्घहेति का नाम खुदा हुआ था।

तब ब्रह्मदत्त ने पछतावे के आँसू बहाते हुए उसको गले से लगा लिया और कहा—"दीर्घायु ! तुम्हारे पिता महा-पुरुष थे। हाय ! मैं कितना अभागा हूँ कि ऐसे सत्पुरुष को मार डाला मैंने !" उस दिन से ब्रह्मदत्त ने अपना स्वभाव बदल लिया।

कलकत्ते के एक मुहल्ले में श्यामनंदन जी बहुत से मकानों के मालिक थे। वे खुद एक मकान में रहते थे। बाकी मकान उन्होंने भाड़े पर उठा दिए थे। जो घर उन्होंने भाड़े पर दिए थे, उनमें एक ऐसा था जो बहुत छोटा सा था; पर उसकी बाड़ी बड़ी थी।

उसमें रामलाल नाम के एक स्कूल-मास्टर पंद्रह रुपए किराया देकर रहते थे। रामलाल की पत्नी सुखवती को वह घर सब तरह से अच्छा लगा। उसमें सब तरह की सुविधा थी। लेकिन बाड़ी में एक बड़ा शमी का पेड़ था। उसे देखते ही उसे डर लगा।

"शमी के पेड़ पर तो भूत रहते हैं और भूतों से मुझे बड़ा डर लगता है। इसलिए मकान-मालिक से कह कर वह पेड़ कटवा दीजिए।" उसने अपने पति से कहा।

"भूत-प्रेत कुछ नहीं! अभी इस पेड़ को कटवाने में बहुत खर्च होगा। मकान-मालिक नहीं देगा। इसलिए ऐसी बात न चलाओ!" रामलाल जी ने स्त्री से कहा।

रामलाल जी कह तो गए कि भूत-प्रेत कुछ नहीं। लेकिन सुखवती के मन में डर लगा गया। इसलिए वह बार-बार पति को उस पेड़ की याद दिलाती रही।

आखिर जब उनके नाकों दम हो गया, तो उन्होंने यह बात मकान-मालिक से कह दी और वह पेड़ कटवा देने को कहा।

"खैर, पेड़ कटवा दिया जाएगा। क्योंकि वह तो कोई फल देने वाला वृक्ष है नहीं।" यह कह कर श्यामनंदन जी ने उनकी बात मान ली। फिर उन्होंने मजदूरों को खबर भी भेज दी। लेकिन किसी कारण से उस समय वे न आ सके और यह काम वैसे ही रह गया। पीछे रामलाल जी से किसी बात पर झगड़ा हो जाने के कारण उन्होंने पेड़ कटवाने का निश्चय बदल लिया। रामलाल ने

नन्दलाल

भी फिर कभी यह बात न चलाई। इस तरह कुछ दिन बीत गए। दोनों में झगड़ा होने का कारण यह था कि अन्य नगरों की तरह कलकत्ते में भी मकानों के भाड़े बढ़ गए थे। महँगी का जमाना था। मौका देख कर श्याम-नंदन ने भी अपने सभी मकानों का किराया बढ़ा दिया। रामलाल अब तक पंद्रह देते आए थे। उन्होंने कहा—"आप अगले महीने से पचीस रुपए माहवार दीजिए!"

उनकी यह बात सुनते ही रामलाल का कलेजा बैठ गया। उनकी कुल आमदनी मासिक अस्सी रुपए से ज्यादा न थी। फिर वे पचीस रुपए माहवार देकर बीवी-बच्चों का पेट कैसे पाल सकते थे! उन्होंने यह श्यामनंदन से कह दिया। लेकिन श्यामनंदन ने कहा—"तो मैं क्या करूँ! अगर आप यह मकान छोड़ दें तो बहुत से लोग चालीस तक देने को तैयार हैं। मैंने सोचा, आप ग़रीब आदमी हैं। इसीलिए मैंने पचीस माँगे।"

"आपका कहना ठीक है। लेकिन मैं उतना नहीं दे सकता। अठारह दे दूँगा। मैं ग़रीब आदमी हूँ।" रामलाल ने गिड़गिड़ा कर कहा।

"बड़े आए हैं अठारह देने वाले! मैं पचीस से एक धेला भी कम नहीं लूँगा। अगर मंजूर नहीं है तो आज ही मकान खाली कर दीजिए।" श्यामनंदन ने क्रोध के साथ कहा और वहाँ से चल दिए। उन्होंने सोचा कि रामलाल भोला आदमी है। जरा दबाव डालने से मकान छोड़ कर चला जाएगा। इसलिए वे उस दिन से उसे बात-बात पर तंग करने लगे।

लेकिन जब रामलाल को और कोई चारा नहीं रहा तो उन्होंने भी हठ कर लिया कि चाहे जो भी हो, हम इस घर से नहीं हटेंगे।

इससे मकान-मालिक का गुस्सा और भी बढ़ गया और उन्होंने भी हठ कर लिया कि चाहे जैसे भी हो, इसे घर से हटा कर ही छोड़ूँगा। इसके कुछ दिन बाद एक रोज तड़के

ही मजदूरों ने आकर श्यामनंदन से पूछा—"बाबूजी! आपने कुछ दिन पहले हमें पेड़ कटवाने को बुलाया था!"

पेड़ काटने की बात सुनते ही श्यामनंदन को रामलाल की स्त्री की बात याद आई। तुरंत उनके मन में एक उपाय सूझ गया। उन्होंने उन मजदूरों में से मधुआ नामक एक मजदूर के सिवा बाकी सब को चले जाने को कहा। उसके बाद अकेले में उन्होंने मधुआ से कहा—"पेड़ काटने से तुझे क्या मिलेगा? मेरा एक काम करेगा? करेगा तो दस रुपए मिलेंगे!" "क्यों न करूँगा?" मधुआ ने कहा। तब श्यामनंदन ने उसे एक रहस्य बताया और कहा—"रामलाल घर में नहीं है। गाँव गया है। इसलिए आज ही रात यह करो तो अच्छा हो।"

"मैं जरूर यह काम करूँगा और कल इसी वक्त आकर दस रुपए ले जाऊँगा।" यह कह कर मधुआ चला गया। पति के घर पर न होने के कारण उस दिन सुखवती ने जल्दी-जल्दी खा-पीकर बच्चों को सुला दिया और खुद भी लेट रही। जब आधी रात हो गई और वह गाढ़ी नींद में थी तो उसके छप्पर पर कहीं से एक पत्थर आ गिरा। उस

धमाके की आवाज से उसकी नींद टूट गई। उसने सोचा—"देखूँ जाकर, बात क्या है?" इसलिए वह अपनी बड़ी लड़की को लेकर बाहर गई। इतने में उसे अँधेरे में पेड़ के ऊपर से 'हुँ! हुँ!' की डरावनी आवाज सुनाई दी।

सुखवती के कलेजे में खलबली मच गई। उसने पेड़ की ओर देखा तो एक डाल पर आग की एक लपट उठी और तुरंत बुझ गई। पल भर की उस रोशनी में उसे एक भयंकर जीव पेड़ पर से कूदता हुआ और उसकी ओर दौड़ता हुआ दिखाई दिया।

यह देखते ही सुखवती के होश उड़

गए। भूत को देख कर चीख मार कर वह तुरंत बेहोश होकर गिर पड़ी।

तुरंत मधुआ जो थोड़े समय के लिए भूत बना था, पेड़ के दूसरी ओर कूद कर भाग गया। माँ को बेहोश होते देख कर लड़की चिल्लाने लगी। यह सुन कर आस-पड़ोस के लोग जाग कर 'क्या हुआ!' कहते हुए दौड़े आए। सुखवती की अनेक सहेलियाँ आईं। उनमें से एक ने उस रात उसी के घर में सोकर सबेरे तक पहरा दिया। सबेरा होने के बाद भी जब-जब पेड़ के भूत की याद आती तब-तब सुखवती की छाती जोर से धड़कने लगती। बहुत लोगों ने उसे बहुत कुछ समझाया। लेकिन उसने एक न सुनी और कहा—"अब मैं इस घर में हरगिज नहीं रहूँगी।" उसकी हालत देख कर किसी पड़ोसी ने अपने घर का आधा हिस्सा उसे किराए पर दे दिया। तुरंत सुखवती बच्चों के साथ वहाँ आकर रहने लगी।

जब रामलाल गाँव से आए तो उन्होंने सारी बातें मालूम कर लीं। उन्होंने किराए का हिसाब देखा और घर खाली कर दिया।

श्यामनंदन को अब बड़ी खुशी हुई कि उनकी चाल यों काम आई। तुरंत उन्होंने नए किराएदारों की खोज शुरू कर दी। लोग आकर घर देख कर जाने लगे। लेकिन कोई लौट कर आने का नाम न लेता था। बात यह थी कि हर कोई अपने घर जाकर कहता था कि आज मकान मिल गया। लेकिन मकान की बात सुनते ही घर की औरतें कहतीं—"वह मकान! वही श्याम-नंदन जी का मकान न! वह तो भुतहा-घर है। हम नहीं रह सकतीं उसमें। और कोई मकान ढूँढ़िए!" इससे किसी को उस मकान में जाकर रहने की हिम्मत नहीं पड़ती थी। यहाँ तक कि सबको उस मकान की बात मालूम हो गई और वह मकान अब तक खाली ही पड़ा हुआ है।
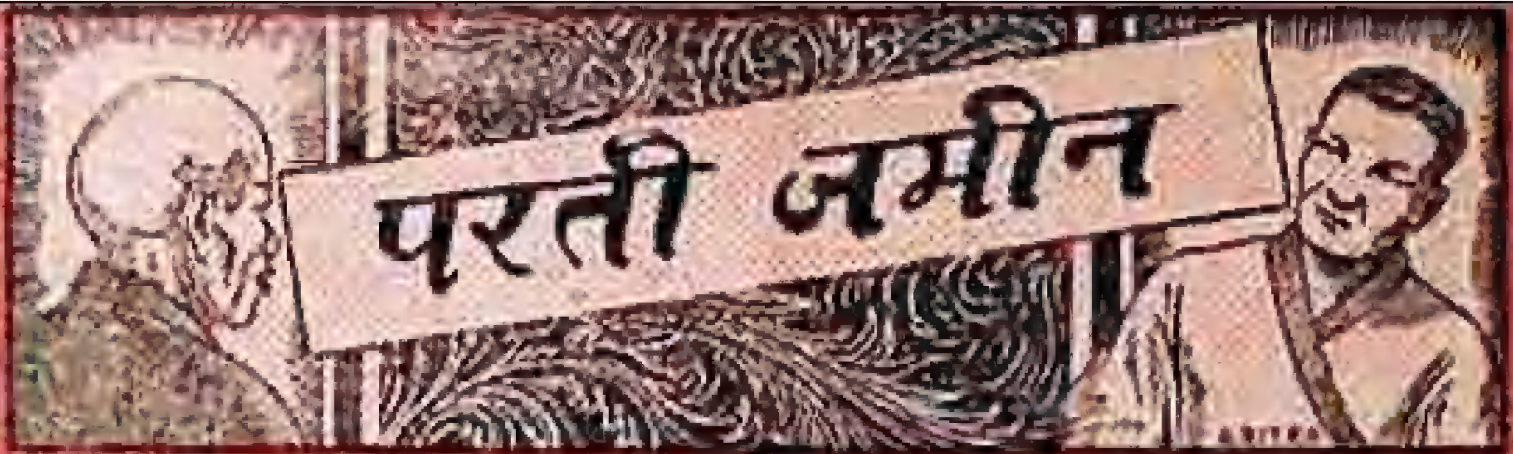
कई सौ बरस पहले की बात है। जापान में ओमजो नामक एक किसान रहता था। उसके एक ही लड़का था जिसका नाम था हिल्सू। उसके पास चार एकड़ जमीन थी जिसमें धान पैदा होता था। इतनी जमीन में अगर वह ठीक से खेती करता, तो खा-पीकर कुछ बचा भी सकता था। लेकिन अजीब बात तो यह थी कि ओमजो तीन ही एकड़ में खेती करता और एक एकड़ यों ही परती छोड़ देता था।

हिल्सू को यह अच्छा न लगा। वह अपने बाप से कहने लगा—"हम जिस साल जितना पैदा करते हैं, उसी साल खा-पीकर खतम कर देते हैं। अगर अकाल पड़ गया तो हम क्या करेंगे! हमें आगे का भी तो कुछ ख्याल रखना चाहिए!"

लेकिन ओमजो अपने निश्चय पर अटल रहा। वह उसे समझाता—"बेटा! तुम्हारा कहना ठीक है। लेकिन तुम बराबर अपनी ही बात क्यों सोचते रहते हो? क्या तुमने कभी सोचा है कि अगर हम परती न छोड़ेंगे तो उन गूंगे जानवरों का क्या हाल होगा! सोचो तो खेतों में जो अन्न उपजता है वह भी तो उन्हीं की कमाई है! जानवर न रहें तो खेती कौन करेगा! फिर अगर वे भूखे रह गए तो हमारी क्या मदद करेंगे! इसलिए कुछ उनका भी तो ख्याल रखना जरूरी है!"

इस तरह बाप-बेटे में बराबर वाद-विवाद चला करता था। कभी-कभी तो यह वाद-विवाद इतना बढ़ जाता था कि बीच-बिचाव करना पड़ता था। लेकिन बीच-बिचाव करने वाले को दोनों पक्षों की बात ठीक जँचती और वे किसी का समाधान नहीं कर सकते।

आखिर बरसों विवाद करके भी जब कुछ फायदा न हुआ तो हिल्सू ऊब गया। वह

कुमारी आभा

सोचने लगा—"इतना कहने पर भी बूढ़ा नहीं मानता। अपना हठ नहीं छोड़ता। अच्छा, और कितने दिन इसका हठ चलेगा!"

आखिर वह घड़ी भी नजदीक आ गई जब ओमजो इस संसार से विदा लेने को तैयार हो गया। अंतिम समय में उसने लड़के को बुला कर कहा—"बेटा! तुम जानते ही हो कि परती जमीन के बारे में मैंने कितना हठ किया। मैं यह भी जानता हूँ कि मेरे न रहने पर तुम जो चाहोगे करोगे। कोई रोकने वाला न होगा। पर तुम मेरा कहना सुनो! मेरे सामने वादा करो कि तुम एक एकड़ वैसे ही परती छोड़े रहोगे। तब मैं निश्चिन्त होकर आँखें मूंद सकूँगा।" बूढ़े की आँखों में आँसू भर आए।

तब हिल्लू ने कहा—"पिताजी! मैं आपकी इच्छा पूरी करना ही अपना धर्म समझता हूँ।"

यह सुन कर ओमजो का मन निश्चिन्त हो गया और उसकी साँस बंद हो गई। लेकिन पिता के मरते ही हिल्लू अपना वादा भूल गया। उसने जो इतने दिनों से सोच रखा था, उसे पूरा कर ही दिया। कुछ ही दिनों बाद उसने परती जमीन जोत ली। जमीन उपजाऊ थी। इसलिए उसे खेती के लायक बनाने में कोई मुश्किल न हुई। यहाँ तक कि उसमें बीज भी बो दिए गए। पौधे भी निकल आए।

थोड़े दिन बाद फसल काटने का समय आया। फसल देखकर हिल्लू गर्व से भर गया। लेकिन उसी समय एक विचित्र बात हुई।

एक दिन सवेरे हिल्लू अपने खेत में गया। वहाँ खड़ा-खड़ा अपने खेत की ओर देख रहा था कि इतने में उसे मनुष्य की सी आवाज़ में यह गाना सुनाई पड़ा—

"अपनी भूल सुधारो प्यारे! मान पिता की बात दुलारे! अपना हठ छोड़ो तुम भाई!

सब संकट टल जाए भाई !" यह सुन कर हिल्लू ने चारों ओर घूम कर देखा ! लेकिन उसे कहीं कोई आदमी न दिखाई पड़ा। "यह तो गजब की बात है !" यह सोचते हुए वह धीरे-धीरे अपने खेत की ओर देखने लगा। इतने में फिर उसे वही गाना सुनाई दिया। इस बार हिल्लू ने उस ओर गौर से देखा जहाँ से वह गाना आ रहा था।

एक बबूल के पेड़ पर उसे एक हिरामन दिखाई दिया। "वाह ! यह तोता मनुष्य की तरह कैसे गाता है ! इसके अलावा इसे मेरे पिता की बात कैसे मालूम हुई !" यह सोच कर हिल्लू ने उस तोते से पूछा— "हिरामन ! तुम कौन हो ! हमारे घर की बातें तुम्हें कैसे मालूम हुईं !"

"मान लो, किसी तरह मालूम हो गईं ! मैं जो कुछ कहता हूँ तुम्हारी भलाई के लिए ही। वादा तोड़ने से बढ़ कर दूसरा क्या पाप हो सकता है ! क्या तीन एकड़ जोतने से तुम्हारा पेट नहीं पल सकता ! क्यों नाहक लालच में पड़ते हो ! अब भी कुछ बिगड़ा नहीं। इस फसल को काटना छोड़ दो और आज ही यह एकड़ अपने जानवरों के लिए छोड़ दो !" हिरामन तोते ने हिल्लू को सलाह दी।

लेकिन उसकी बात सुन कर हिल्लू ने चिढ़ा कर हँसते हुए कहा—"वाह ! बड़ा आया है सलाह देने वाला तू ! जा ! जा !" तुरन्त तोता फुर्र से उड़ गया।

दूसरे दिन फिर हिल्लू अपना खेत देखने आया। लेकिन खेत में वहाँ क्या था ! पिछले दिन जहाँ हरी-भरी फसल लहरा रही थी वहाँ आज सूखी, उजड़ी जमीन दरारों से भर रही थी। पहले तो उसे सन्देह हुआ कि कहीं मैं दूसरे के खेत में तो नहीं आ गया हूँ ! लेकिन थोड़ी देर बाद उसे निश्चय हो गया कि यह उसी की जमीन है। अब हिल्लू की आँखों में आँसू उमड़ आए। फिर भी

उसने अपना हठ न छोड़ा। वह उस खेत को फिर से जोतने लगा। लेकिन दूसरे दिन हिल्लू ने आकर जो देखा तो जमीन ऐसी दीखी, जैसे उस पर कभी हल चला ही न हो।

बस, हिल्लू का गुस्सा और भी बढ़ गया। उसने सोचा—"यह सब उस तोते की ही करनी है!"

इतने में कहीं से एक आवाज़ आई—"यह सब तुम्हारी मूर्खता का ही फल है।" हिल्लू ने पेड़ की ओर आँख उठाई। तोता बैठा था।

"अकाल पड़ने पर काम में लाने के लिए अनाज जमा करना चाहते हो न! इसीलिए तुम यह खेत जोत रहे हो न!" तोते ने उससे पूछा।

"हाँ! इसी लिए!" हिल्लू ने जवाब दिया।

"तो मैं तुम्हें एक उपाय बताता हूँ। सुनो! तुम्हारे तीन एकड़ों में जो अन्न उपजे उसे तुम अकाल के दिनों के लिए जमा कर रखो। तुम्हारे हर रोज़ के लिए खाने की चीज़ें मैं तुम्हें ला दिया करूँगा। मंज़ूर है न!" तोते ने पूछा।

"मंज़ूर है। इसमें मुझे कोई उज्र नहीं।" हिल्लू ने जवाब दिया। "अच्छा, तो कल मैं ठीक इसी वक्त यहाँ आ जाऊँगा। तब तुम मुझे अपने साथ घर ले जाना।" हिरामन यह कह कर तुरन्त उड़ गया।

दूसरे दिन हिल्लू ने खेत के पास आकर थोड़ी देर तक तोते की राह देखी। इतने में वह आ गया। वह अपनी चोंच से एक छोटा सा मट्टी का कटोरा पकड़े लाया था। हिरामन को हिल्लू अपने साथ घर ले गया और कहा—"अच्छा, आज खाने के लिए क्या लाए हो!"

तब तोते ने वह कटोरा हिल्लू के सामने रख दिया और तीन बार उसकी प्रदक्षिणा

करके हिल्लू से कहा—"तुम जो चीज़ें खाना चाहते हो, मन में एक बार उनका नाम लेकर इस कटोरे को ज़मीन पर औंधा रख दो।"

हिल्लू ने वैसे ही किया तो उसकी मन-चाही चीज़ें कटोरे में से निकल आईं। उन्हें खाकर हिल्लू को बहुत आनन्द हुआ। फिर उसने वह कटोरा हिफ़ाज़त से एक जगह धर दिया और तोते को पिंजड़े में बन्द कर दिया। उस रात हिल्लू ने अपनी भूख मिटाने के लिए बर्तन निकाला और तीन बार तोते की तरह प्रदक्षिणा करके उसे ज़मीन पर उलट दिया। लेकिन कुछ न हुआ। तब तोते ने, जो पिंजड़े में बैठा हुआ था, कहा—"यह महिमा मुझमें है। कटोरे में नहीं। अगर तुम खाने की चीज़ें चाहते हो तो मुझे बाहर निकालो।"

तब हिल्लू ने उसे बाहर निकाला। इस तरह एक हफ़्ता बीत गया। तब हिल्लू के मन में ख़याल पैदा हुई। उसने सोचा—"तोते को मैंने पिंजड़े में बन्द कर ही दिया है। इसलिए मैं फिर उस खेत को क्यों न जोतूँ!" उस दिन से हिल्लू, जो कभी घर छोड़ कर नहीं जाता था, अब सबेरे घर से निकल जाता और खूब अँधेरा होने के बाद वापस आता था। यह देख कर तोते के मन में सन्देह पैदा हुआ।

उसने सोचा—"इसे कौन-सी ऐसी ज़रूरत आ पड़ी है जो यह सबेरे घर से निकल जाता है और रात को लौटता है! पेट के लिए तो इसे अब कोई काम नहीं करना पड़ता है।" वह बार बार हिल्लू से इसका कारण पूछने लगा।

हिल्लू उससे कहता—"घर में बेकार बैठे-बैठे मन ऊब जाता है। इसलिए ज़रा बाहर घूम-फिर आता हूँ।" इस तरह बहाने-बाज़ी किया करता था। असल बात तो यह थी कि हिल्लू फिर से खेती करने लग गया था।

उसने सोचा था कि "तोता तो अब मेरी मुट्ठी में है। फिर डर क्या है ?" कुछ दिन बाद उस खेत में फसल लगी, पकी और कटने पर आई।

एक दिन खाने के समय हिरू रोज़ की तरह तोते को पिंजड़े से निकालने गया जिससे उसे कटोरे से खाना मिले। लेकिन पिंजड़े के पास जाकर वह देखता क्या है कि तोता ग़ायब है। दौड़ा-दौड़ा वह खेत में पहुँचा। उसे जो डर था, वही हुआ। देखता क्या है कि खेत की फसल ग़ायब है और खेत ऊसर बन गया है। यह देख कर हिरू ने आँखों से आग बरसाते हुए बबूल के पेड़ की ओर देखा।

तब तोते ने पेड़ पर से कहा—"भई! मैंने कभी नहीं सोचा था कि तुम मुझे इस तरह धोखा दोगे। सच है, लालच बुरी बला है! मैंने तुम्हें तरह तरह से समझाया। यही नहीं, घर बैठे तुम्हें खाना दिया। फिर भी तुमने अपना लोभ नहीं छोड़ा। इसी से अब यह दृश्य देखना पड़ा। मैंने इतने दिन तक तुम्हारी देख-भाल की। तुम्हारे लिए अनेकों कष्ट उठाए। जानते हो, यह सब मैंने क्यों किया ? मैं कोई पराया नहीं हूँ। तुम्हारा पिता हूँ।" यह कह कर तोता पेड़ से उतरा और हिरू के पैरों पर गिर कर मर गया।

यह देख कर हिरू ज़ोर-ज़ोर से आँसू बहाने लगा। अपने पिता के प्रति उसने जो द्रोह किया था उसकी याद करके उसका हृदय पछतावे की आग में जलने लगा। वह सिर पीटने लगा। लेकिन अब क्या हो सकता था! दूसरे दिन उसने उसी खेत में उस तोते की समाधि बनाई। फिर कभी स्वप्न में भी उस खेत को जोतने का विचार नहीं किया। उसके मरने के बाद भी किसी ने उस खेत में हल चलाने की कोशिश न की। इसलिए वह ज़मीन हमेशा के लिए परती बन गई।
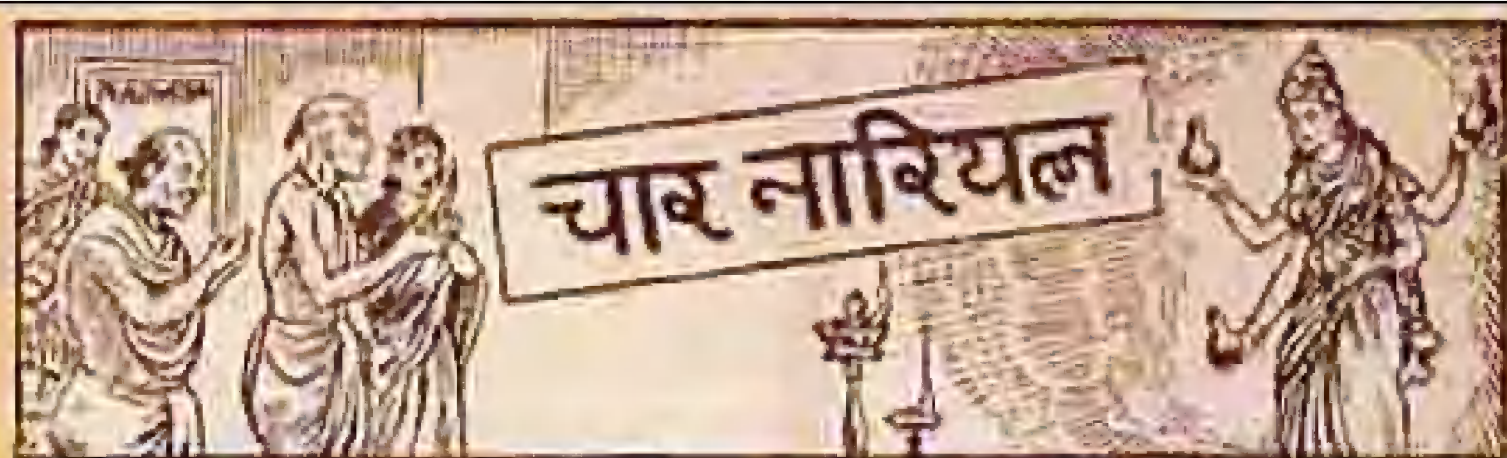
गंगा-नगर में गणपति शर्मा एक मामूली गृहस्थ थे। वे एक देवी की पूजा करते थे, जिसका नाम था 'इष्ट-कामेश्वरी'। उसी गाँव में धनराज नाम का एक गरीब बनिया भी रहता था। नाम बड़े और दर्शन थोड़े! नाम धनराज, पर घर में भूँजी भाँग नहीं! इसलिए उसने शर्माजी के पास जाकर अपना दुखड़ा रोया और धनी बनने का उपाय पूछने लगा। सुनते-सुनते शर्माजी ने कहा—"मैं जिस देवी की पूजा करता हूँ तुम भी उसी की पूजा करो। अगर हम पर उनकी कृपा हुई तो हमारी सभी इच्छाएँ पूरी हो जाएँगी।"

उनकी बात सुन कर धनराज ने कहा—"मैं फिर अपने घर में अलग पूजा का झंझट क्यों लगा रखूँ। मैं भी पूजा के समय रोज आपके घर आ जाऊँगा और देवी को दण्डवत कर लूँगा।"

"ठीक है।" शर्माजी ने कहा। कुछ दिन बाद उन दोनों की भक्ति से प्रसन्न होकर देवी प्रत्यक्ष हुईं। उनके चारों हाथों में एक एक नारियल था। "तुम लोग जो चाहो माँग कर ये नारियल फोड़ दो। तुम्हारी इच्छाएँ पूरी हो जाएँगी।" यह कह कर देवी ने तीन नारियल तो शर्माजी को दिए और एक धनराज को दे दिया। फिर वे अन्तर्धान हो गईं। शर्माजी बहुत खुश हुए। लेकिन धनराज का मुँह लटक गया। उसने अपने घर जाकर पत्नी से सारा हाल सुनाया और कहा—"देखो तो! देवी ने भी पक्षपात किया! ब्राह्मण को तीन नारियल दिए और मुझे एक ही।"

"जाने दीजिए! अगर तकदीर अच्छी रही तो एक ही काफी है। जल्दी में कुछ-का-कुछ न माँग कर हम दोनों सोच-विचार कर माँग लेंगे।" धनराज की पत्नी ने कहा।

धनराज धन-दौलत माँगना चाहता था। लेकिन उसकी पत्नी बेटे-बेटियाँ, नाती-पोते चाहती थी। फिर धनराज ने सोचा कि उनके शादी-ब्याह देख कर आँखें ठण्डी करने के लिए लम्बी उमर भी चाहिए। उसकी पत्नी ने सोचा कि नाती-पोते उनके बुढ़ापे में सेवा-टहल करें तो अच्छा हो। इस तरह सोच-सोच कर उन दोनों के मन में सन्देह हुआ कि एक नारियल से इतनी इच्छाएँ कैसे पूरी होंगी!

आखिर धनराज को एक उपाय सूझ गया। उसने खूब सोच-विचार कर अपनी सब इच्छाएँ संक्षेप में एक पुर्जे पर यों लिख डालीं — "देवी! हमें ऐसा वर दो, जिससे मेरे पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र, और दौहित्र अपनी स्त्रियों के साथ आकर, सात मंज़िलों वाले चाँदी के महल में अपने पोते के लड़के को, सोने की ज़ंजीरों से झूलते हुए रत्न-जटित पालने में लिटा कर, अपने शरीर पर के नव-रत्न जड़े गहने शोभित करती हुई, झुलाने वाली मेरी स्त्री को और पास में खड़े होकर देखने से आनंदित होने वाले इस बन्दे की सेवा करें!" उसने यह अपनी पत्नी को भी दिखाया।

तब उसने कहा — "वाह! आपने कैसे एक वाक्य में सभी बातें लिख डालीं। अच्छा है! अब देरी न कीजिए! इस पुर्जे को सावधानी से पढ़ कर नारियल फोड़ दीजिए!"

धनराज ने वैसे ही किया। तुरंत उसका पुराना मकान सात मंज़िल वाले महल में बदल गया। धनराज की पत्नी के बदन पर नव-रत्न-खचित गहने जगमगाने लगे। इतना ही नहीं, उसके कुछ ही दिनों में सन्तान के आगम की आशा भी हो गई। अपने मन की सभी इच्छाएँ पूरी होतीं देख कर धनराज और उसकी पत्नी बहुत आनंदित हुए।

जिस तरह धनराज ने वर माँगने के विषय में अपनी पत्नी की राय पूछी, उस तरह शर्माजी ने नहीं पूछी। उनको शक था कि उनकी स्त्री मायके वालों से ज्यादा प्रेम रखती है। इसलिए उस पर विश्वास करना अच्छा न होगा। इसलिए शर्माजी ने स्त्री की राय बिना पूछे ही मन में कुछ सोच कर नारियल फोड़ना चाहा।

लेकिन उन्होंने जो शंका की थी, वही हुआ। उनकी पत्नी ने इतने में वहाँ आकर कहा—"अजी! दो नारियलों से आप जो चाहें माँग लें। तीसरे से तो जरूर ऐसा वर माँगिए जिससे हमारा घर सोने-चाँदी से भर जाए।"

पत्नी के प्रति शर्माजी के मन में क्रोध था ही। इसलिए उन्होंने जल कर कहा—"सोने-चाँदी से नहीं, सारा घर खटमल के अंडों से भर जाए।" यह कह कर नारियल फोड़ डाला।

बस, अब क्या था! उनकी इच्छा सचमुच पूरी हुई। सारा घर खटमल के अंडों से भर गया।

यह देख कर शर्माजी का मन झुंझला गया। उन्होंने और एक नारियल फोड़ते हुए कहना चाहा कि अंडे गायब हो जाएँ। लेकिन जल्दी में मुँह से निकल गया—"आँखें गायब हो जाएँ।" बस, अब क्या था! दोनों अंधे हो गए। इस दुर्घटना के कारण बहुत दुखी होकर शर्माजी ने आखिर फिर आँखें पाने के लिए तीसरा नारियल उठाया और कहा—"आँखें फिर मिल जाएँ।" यह कह कर तीसरा नारियल भी फोड़ डाला। उन्हें फिर आँखें तो मिल गईं। लेकिन देवी के वर से उन्हें कुछ भी फायदा न हुआ।

इसलिए जो सोच समझ कर काम करता है, वही सुखी होता है।

किसी गाँव में वनमाली नाम का एक ग़रीब आदमी रहता था। वह अविवाहित था। उसका पेशा क्या था, वह जीविका कैसे चलाता था, यह किसी को मालूम न था। अब आप सोचिए कि जिसको घर-बार की चिन्ता न हो वह रुपए-पैसे से क्या करेगा! लेकिन बात ऐसी न थी। वास्तव में ऐसा एक भी दिन न जाता था जब कि वनमाली किसी न किसी से उधार न माँगता हो। इस तरह उधार ले-लेकर वह करता क्या था, यह किसी को मालूम न था।

वनमाली जब पहले-पहल उस गाँव में आया तो उसने कृपाराम जी से एक दुअन्नी उधार ली। "कृपाराम जी! मैं परसों ही लौटा दूँगा आपकी यह दुअन्नी!" उसने वादा किया। अपने वादे के मुताबिक तीसरे दिन शाम को कृपाराम के घर जाकर, उसने दुअन्नी लौटा दी।

कृपाराम को पहले उस पर भरोसा न था। क्योंकि वनमाली से उनकी ज़्यादा जान-पहचान न थी। वह उनके लिए बिलकुल अजनबी था। तो भी उन्होंने सोचा—"दो ही आने तो माँगे हैं। बेचारे को न मालूम, कितनी ज़रूरत है! न लौटाया तो भी हर्ज नहीं।" यह सोच कर उन्होंने दो आने दे दिए।

लेकिन जब वनमाली ने अपने वादे के मुताबिक दुअन्नी ठीक दूसरे दिन लौटा दी, तो कृपाराम को उस पर विश्वास हो गया। उसके बाद वनमाली ने कृपाराम से कई बार आठ-दस आने उधार लिए और वादे के मुताबिक समय पर लौटा दिए।

इस तरह कुछ दिन बीत गए और उस गाँव में वनमाली की धाक जम गई। सब लोग कहने लगे—"वनमाली बात का

भला आदमी है। बात का धनी इस ज़माने में कहाँ मिलता है!"

धाक जमते ही, बनमाली जिससे जब जो कुछ माँगता, लोग तुरंत खुशी से देने लग गए।

एक दिन बनमाली ने उसी गाँव के गोपाल साव के पास जो सबसे धनी आदमी माने जाते थे, जाकर कहा—"साबजी! अचानक मुझे एक दोस्त की शादी में जाना पड़ रहा है। वर वाले मेरे रिश्तेदार हैं। इसलिए कुछ-न-कुछ भेंट ले ही जाना है। मुझे सौ रुपए चाहिए। मैं पाँच दिन में लौटता हूँ। आज मंगलवार है! कल शादी होगी। रविवार तक सारा काम खतम हो जाएगा। सोमवार को मैं यहाँ वापस आ जाऊँगा। आते ही आपके रुपए लौटा दूँगा। आपके रुपए लौटा कर ही घर जाऊँगा।"

साबजी बड़े शक्की आदमी थे। सवालों सवाल करके, खूब जान-बूझने के बाद ही वे लोगों को उधार देते थे। उनकी मुट्ठी से एक पाई भी खिसकाना बड़ा मुश्किल था। बनमाली की बात सुन कर वे मन ही मन सोचने लगे—"यह बनमाली बड़ा अजीब आदमी मालूम पड़ता है। यह काम-धाम तो कुछ करता नहीं। इसके पास ज़मीन-जायदाद भी कुछ नहीं है। फिर यह पेट कैसे पालता है! किसी को कुछ मालूम नहीं होता। गाँव में हमेशा यह निठल्ला घूमता रहता है। मालूम होता है, उधार लेकर मौज करना ही इसका पेशा है। कहता है, कल शादी में जाना है। कहता है, शादी में कुछ भेंट ले जाएगा। सौ रुपए मुझसे उधार लेकर वो खर्च कर देगा। फिर कहता है, शादी होते ही यहाँ लौटेगा और लौटते ही मेरा रुपया मुझे लौटा कर ही घर जाएगा! और भी अजीब बात यह जान पड़ती है कि

शादी में खर्च करने के लिए तो रुपए उधार ले जा रहा है। फिर वहाँ से लौटते ही रुपए तुरंत कैसे लौटा देगा! इतने में इसके पास रुपए कहाँ से आ जाएँगे! अगर रुपए इसके घर में हैं, तो फिर मुझसे उधार क्यों माँगता है!" इस तरह साहूजी अपने मन में तर्क-वितर्क करने लगे।

आखिर जाने क्या सोच कर, वे अंदर गए और रुपए लाकर वनमाली के हाथ में रख दिए।

वनमाली को बड़ी खुशी हुई। खास कर साहूजी जैसे शक्की आदमी से रुपया लेना कोई मामूली बात नहीं थी। यह उसकी एक सफलता थी। वनमाली शादी में गया या नहीं, यह किसी को मालूम नहीं। हमें यह जानने की जरूरत भी नहीं। हमारे लिए तो इतना ही काफी है कि सोमवार को सवेरे ही, याने अपने वादे के दिन, वादे के मुताबिक समय पर वनमाली साहूजी के घर आया।

इसे देख कर साहूजी को बड़ा अचरज हुआ। उन्होंने कभी न सोचा था कि वनमाली अपनी बात का इतना पक्का निकलेगा। इसलिए उन्होंने बहुत खुश हो कर कहा—"क्यों वनमाली! तुम शादी से हो आए! कोई दिक्कत तो नहीं हुई! वर के लिए तुम क्या-क्या भेंट ले गए!" साहूजी ने बड़ी उत्सुकता से उससे अनेक सवाल किए।

तब वनमाली ने अपने हाथों दी हुई भेंटों का वर्णन करके ब्याह का सारा वृत्तांत सुनाया और कहा—"लीजिए! साहूजी! ये हैं आपके रुपए! आपको सैकड़ों धन्यवाद! आपने मुँह खोलते ही मुझे सौ

मुझे पाँच दिन बाद मेरे ही रुपए लाकर लौटा दिए।

इससे पता चलता है कि यह इतने दिनों से यही खेल करता आ रहा था। बहुत लोगों से रुपए उधार लेता था और उनके रुपए फिर उन्हीं को लौटा देता था। इसलिए सब लोग इसे 'बात का बड़ा पक्का है' कह कर, इसकी इज्जत करते थे। लेकिन कोई इसका भेद अब तक न जान सका। अब प्रश्न यह उठता है कि इसने ऐसा क्यों किया!

इसका एक ही कारण हो सकता है। इसने कृपाराम जी से एक दुअन्नी उधार लेकर यह कुचक्र रचा और उसके जरिए इसने लोगों का विश्वास-पात्र बन कर अपनी साख बढ़ाई। फिर सौ रुपए तक उधार लिया। इस तरह धीरे धीरे यह और भी विश्वास बढ़ाता जाएगा और एक ही बार में सबों की लुटिया डुबो कर चम्पत हो जाएगा। यही इसका उद्देश्य था। आप सबने उस पर पूरा विश्वास कर लिया और उसने जितना माँगा, उधार दिया। आज अगर मैंने उसकी परीक्षा न ली होती तो उसकी पोल कभी न खुलती। जो हो गया, सो हो गया। अब से इस महात्मा से सावधान रहिए।" सावजी ने सबको चेताया।

इस तरह बनमाली की पूरी कहानी सुन कर लोगों ने सोचा—"तो बनमाली बात का पक्का नहीं। वह तो भारी चकमेबाज है! अरे! हम इतने अंधकार में थे! अब ऐसे लोगों पर कभी विश्वास न करना चाहिए।" यह सोच कर उन लोगों ने निश्चय कर लिया कि अब कभी इसको उधार न देंगे। इतना ही नहीं, उन्होंने सोचा कि बनमाली को अच्छा सबक पढ़ाना चाहिए। लेकिन बनमाली वहाँ था कहाँ! वह तो ऐसा लापता हो गया कि फिर किसी को कहीं दिखाई नहीं दिया।

जहाँ कि चीज़ें तैयार हो रही थीं। संयोग से वहाँ कोई न था। मेंढक ने सोचा—"अच्छा मौका है।"

चूहे ने उसे सावधान किया—"अभी कोई न कोई आ जाएगा।"

"अरे जाओ! अब मैं तुम्हारी राय नहीं सुनना चाहता। तुम तो भारी डरपोक हो।" यह कह कर मेंढक ने उसे दुत्कार दिया। लेकिन फिर कुछ सोच कर उसने कहा—"मूषिक देव! तुम डरते बहुत हो। इसलिए जाओ, कमरे के दरवाजे पर पहरा दो। ज्यों ही किसी के आने की आहट हो, मुझे इशारा कर देना। इस बीच सब चीज़ें चख कर मैं तुम्हें बता दूँगा। बाद को तुम भी जाकर चख लेना!"

चूहे ने उसकी बात मान ली। अब मेंढक ने धीरे से बरतन पर का ढकना हटा डाला। नजदीक ही एक कलछुल पड़ा था। उसने गरमा-गरम चीज़ निकाल कर लालच और उतावली के मारे वैसे ही मुँह में डाल ली। इतने में रसोइया वहाँ आ धमका। अब तो मेंढक के होश उड़ गए। उस जलते हुए कौर को न वह निगल सकता था, न उगल ही सकता था। गला जला जा रहा था। अब वह क्या करता! रसोइए को देख कर उसी तरह एक कोने में दुबक गया। संयोग से रसोइए ने उसकी ओर नहीं देखा। वह बरतन पर फिर ढकना रख कर बाहर चला गया। तब कहीं मेंढक की जान में जान आई। उसने बाहर आकर चूहे को पुकारा। लेकिन यह क्या! उसके गले को क्या हो गया था! चूहे का भी कहीं पता न था। वह कभी का लापता हो गया था। आखिर मेंढक ने बाहर जाकर खाँस-खखार कर फिर गाने की कोशिश की। लेकिन सब बेकार! उस दिन से उसके गले से 'टर्र टर्र' शब्द के सिवा कुछ नहीं निकलता।

संकेत

बाएँ से दाएँ :

1. जनता
3. सबेरा
4. महादेव
6. पृथ्वी
8. लम्बी कहानी

* * *

ऊपर से नीचे :

1. सूरज
2. शान्ति
4. मित्र
5. चन्द्रमा
6. पूँछ
7. नर

करके देखो !

दो दियासलाई की तीलियाँ लो। एक के एक सिरे को बीच में से चीरो। दूसरे का सिर गढ़ कर पैना बनाओ। फिर उस सिरे को पहली तीली के चिरे हुए सिरे में घुसा दो। तब दोनों तीलियाँ मिला कर अंग्रेज़ी के

वी (V) अक्षर के आकार में हो जाएँगी। तब कागज़ काटने वाला चाकू लेकर धार वाला सिरा ऊपर की ओर कर दो। चाकू इस तरह पकड़ा जाए कि वह आगे-पीछे या बगल में झुका हुआ न हो। तब इन तीलियों को चाकू पर ऐसे लटका दो कि उनके निचले सिरे मेज़ की सतह पर हल्के से छू जाएँ। तब देखोगे कि तीलियाँ चाकू की धार पर अपने आप चलने लगेंगी।

* * *

दो गिलास ले लो। दोनों को पानी से बराबर भर दो। फिर एक में नमक डाल दो और अच्छी तरह घुल जाने दो। तब एक अंडा लाकर मीठे पानी में डाल दो। वह तुरंत डूब जाएगा। फिर उसे खारे पानी में डाल दो। वह डूबेगा नहीं। तैरता ही रहेगा।

* * *

खारे पानी में एक महीन धागे को भिगो कर सुखा लो। इस तरह उसको छः सात बार उसी खारे पानी में डुबा कर सुखा लो। अब उस धागे के एक छोर से अँगूठी जैसी कोई चीज़ बाँध कर लटका दो। दूसरे छोर को हाथ में किसी चीज़ से पकड़े रहो। याने अब अँगूठी वाला छोर लटकता रहेगा फिर धागे को नीचे की ओर से सुलगा दो। धागा धीरे धीरे ऊपर तक जल जाएगा। लेकिन अजीब बात यह होगी कि तुम्हारी बँधी हुई अँगूठी उसी जले हुए धागे से लटकता रहेगी।
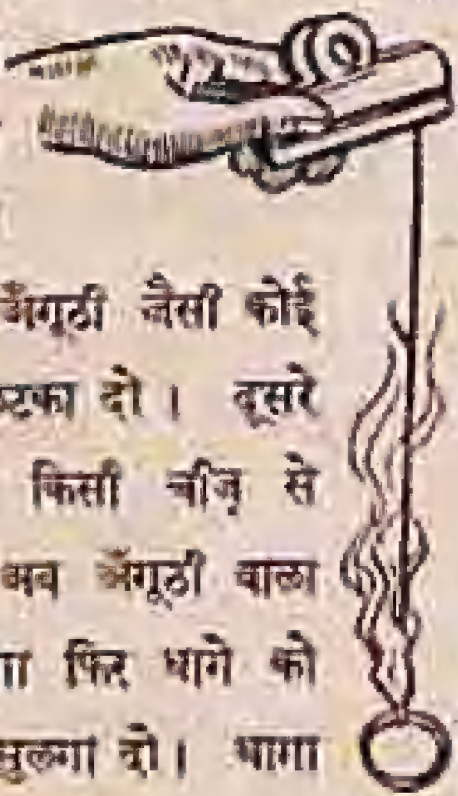
टोप में ताश के पत्ते

ताश की एक नई गड्डी लाकर उसमें से चारों इक्के निकाल कर अपने टोप में कपड़ों के अंदर पहले ही छिपा लेने चाहिए। फिर गड्डी किसी दर्शक को देकर खूब मिला लेने को कहो। साधारणतया दर्शक नई गड्डी देख कर समझेगा कि उसमें सभी पत्तियाँ हैं। इसलिए वह उन्हें गौर से गिनने नहीं बैठेगा। हाँ, तो जब वह गड्डी मिला कर देगा तो बाजीगर को चाहिए कि वह टोप हाथ में लेकर सभी दर्शकों को दिखा कर बता दे कि इसमें कुछ भी धोखा नहीं है। कपड़े के अंदर छिपे हुए इक्के दर्शकों को दिखाई नहीं देंगे। इसलिए दर्शक समझेंगे कि टोप खाली है। तब बाजीगर ताश की पत्तियाँ उस टोप में डाल कर इधर-उधर करके फिर निकाल कर दर्शकों को देगा और फिर एक बार खाली टोपी दिखा देगा। उसके बाद बाजीगर टोप को एक रूमाल से ढक कर (वह अपनी आँखों पर पट्टी बँधवा ले तो और भी अच्छा हो) उस रूमाल के अंदर हाथ डाल कर, कपड़े के अंदर छिपे हुए चारों इक्के बाहर निकाल लेगा। तब सब लोग दंग रह जाएँगे। इस तमाशे को दिखाने के पहले घर पर इसका खूब अभ्यास कर लेना चाहिए। क्योंकि सब कुछ हाथ की सफाई पर निर्भर है।

जो इस सम्बन्ध में प्रोफेसर साहब से पत्र-व्यवहार करना चाहें वे उनको 'चन्दामामा' का उल्लेख करते हुए अंग्रेज़ी में लिखें।

प्रोफेसर पी. सी. सरकार, मैजीशियन,
१२/१ अमीर लेन, बालीगंज, कलकत्ता-१९

रङ्ग भरो—२-रे चित्र की कहानी

उस विद्वान ने जादूगर की किताबें हरूफ-ब-हरूफ पढ़नी शुरू कीं। इस तरह बहुत मेहनत करने के बाद अंत में उसकी इच्छा सफल हुई। एक पुरानी पोथी में तोते को फिर मनुष्य-रूप देने के बारे में यों लिखा था—"यहाँ से उत्तर-पूर्व की ओर सौ योजन जाने पर एक महासागर मिलेगा। उसको भी पार कर, किनारे के घोर जंगलों में फिर सौ योजन तक यात्रा करने पर एक बरफ से ढका पहाड़ दिखाई देगा। उस पहाड़ पर एक महल है। महल में एक महात्मा रहते हैं। तोते को आदमी बनाने का मन्त्र सिर्फ वे ही जानते हैं। लेकिन अमावास को छोड़ बाकी सब दिन वे चुप्पी साधे रहते हैं।" विद्वान ने तुरन्त महाराज के पास जाकर यह खबर सुनाई और कहा—"यह काम अत्यन्त कठिन है। यह हर किसी से नहीं हो सकता। इसके लिए कोई ऐसा वीर चाहिए जो प्राणों की भी परवाह न करता हो।" "मैं देश-विदेश में ढिंढोरा पिटवा कर देखता हूँ—कोई आगे आता है या नहीं।" यह कह कर राजा ने घोषणा करा दी कि जो कोई यह काम पूरा कर लाएगा उसे अपनी लड़की देकर, आधा राज भी दूँगा। यह घोषणा सुन कर देश-विदेश से अनेक शूर-वीर लोग आए। लेकिन ब्यौरा सुन कर डर गए और लौट गए।

आखिर सिंहल देश के राजकुमार सिंहपाल ने इस काम का बीड़ा उठा लिया और उस विद्वान का आशीर्वाद पाकर रवाना हुआ। अनेकों कष्ट उठा कर उसने पर्वत माला को पार किया; महासागर पार किया; घोर जंगल भी पार कर वह एक निर्जन प्रदेश से होकर जाने लगा। आखिर इसी तरह धीरज धर कर अनेक योजन जाने के बाद राजकुमार को वह पहाड़ दिखाई दिया। पहाड़ के ऊपर के महल पर एक नजर डालते ही राजकुमार ने समझा कि उसका श्रम सफल हो गया। लेकिन उस गगन-चुम्बी पर्वत पर चढ़ना भी तो कोई आसान काम न था। इसके अलावा दूसरे दिन अमावास थी। याने उसे एक दिन में उस महल तक पहुँचना था। राजकुमार ने बड़ी मुश्किल से उस पर चढ़ना शुरू किया। लेकिन उस बरफ पर पैर टिकना ही मुश्किल हो रहा था। फिर भी वह आगे चढ़ता ही गया। आखिर अमावास भी आ गई। अब राजकुमार अधीर होकर जी-जान से उस महल तक पहुँचने की कोशिश करने लगा।

रङ्ग भरो (कहानी) : चित्र ३

मुख-चित्र

कंस के कहने के मुताबिक अक्रूर कृष्ण और बलराम को मथुरा ले आया। वहाँ पहुँच कर कन्हैया ने उससे कहा—"अक्रूर! जाओ! तुम अपने राजा को हमारे आने की सूचना दे दो। तुम्हारे लौट आने तक हम यहीं रहेंगे।" अक्रूर के जाने के बाद कन्हैया अपने भाई के साथ नगर में घूमने-फिरने गए। धनुष-यज्ञ के अवसर पर नगर विशेष-रूप से सजाया गया था। चारों ओर धूम-धाम मची हुई थी। यह सब देख कर दोनों भाइयों को बहुत खुशी हुई। मथुरा के नगरवासी भी उनकी ओर आकर्षित हुए। वे दोनों जिधर-जिधर जाते थे उधर-उधर सबकी आँखें उनकी तरफ उठ जातीं। थोड़ी देर बाद कन्हैया को एक धोबी कपड़ों की गठरी पीठ पर लादे, सामने से आता दिखाई दिया। वह राजा कंस का धोबी था। वह गठरी कंस के कपड़ों की थी। कन्हैया ने उसे रोक कर कहा—"हमें कुछ कपड़े पहनने को दो। हम राजा के दर्शन करने जा रहे हैं। लौटते ही तुम्हारे कपड़े लौटा देंगे।" लेकिन उस धोबी ने कपड़े देने से इन्कार कर दिया। तब कन्हैया ने एक ही मुक्के में उसे धूल चटा दी और गठरी के सभी कपड़े ग़रीबों में बाँट दिए।

और थोड़ी दूर जाने के बाद उन्हें एक सुंदर कन्या सामने से आती दिखाई दी। उसके चेहरे से मायूसी झलक रही थी। बेचारी खूबसूरत होने पर भी कुबड़ी थी। उसे देख कर कन्हैया ने पूछा—"तुम कौन हो?" "मैं राजा कंस के रनवास की एक दासी हूँ। रानी के लिए चन्दन ले जा रही हूँ।" उस कुबड़ी कन्या ने कहा और थोड़ा चन्दन निकाल कर कन्हैया के बदन पर पोत दिया। तब कन्हैया को उस पर तरस आया और उन्होंने उसकी पीठ पर अपना हाथ फेरा दिया। तुरन्त उस सुंदरी का कूबड़ दूर हो गया। वह बड़े आनन्द के साथ दोनों भाइयों को अपना मेहमान बना कर ले गई। इस तरह थोड़े ही समय में कृष्ण और बलराम ने मथुरा में बहुत से मित्र बना लिए।

बैठ रहो। बस, आँखें चंगी हो जाएँगी।' तब उदय ने उसके कहने के मुताबिक गोली बना कर उसे सन के रेशों से लपेटा। लेकिन आग कहाँ मिले! उदय सोच ही रहा था कि क्या करना चाहिए। इतने में दाढ़ी वाले ने कहीं से आग लाकर उसको सुलगा दिया। तुरंत उसमें से इतना धुआँ निकलने लगा कि मालूम पड़ता था, गाँव के गाँव जले जा रहे हों। तब उदय और उसके भाई आग को घेर कर बैठ गए और तौलिया अपने सिर पर ओढ़ लिया। धुआँ सीधे उनकी आँखों में लगने लगा। पाँच मिनट बाद वे वहाँ से हट गए। एक एक की आँखों से झरनों की तरह आँसू बह रहे थे। कुछ देर बाद आँसू बंद हो गए तो तीनों भाइयों ने अपनी आँखें खोलीं। आश्चर्य! कहाँ उन्होंने सोचा था कि उनकी आँखें चंगी हो जाएँगी। लेकिन इसके बदले आँखें ही गायब हो गई थीं। दाढ़ी वाले की सलाह का कैसा फल हुआ! यह देख कर उदय क्रोध से जलने

लगा। उसने कहा—'अरे दुष्ट! क्या तू ने हमें यह सलाह इसीलिए दी थी!' तब दाढ़ी वाले ने कहा—'भाई! बिना सोचे-समझे गुस्सा न करो! अगर मैं तुम्हें धोखा देना चाहता तो अपने सब रहस्य क्यों बतलाता? सुनो! अभी काम पूरा नहीं हुआ है। अब जरा अपनी जेब से हरे अंजन की डिबिया निकालो और वह अंजन आँखों पर लगा कर देखो तो क्या होता है!' तब उदय ने हरे अंजन की डिबिया निकाल कर अपने और अपने भाइयों की आँखों पर लगा लिया। तुरंत तीनों की आँखें चंगी हो गईं और उन्हें साफ़ साफ़ दिखाई देने लगा। तब उदय बहुत लज्जित हुआ कि उसने दाढ़ी वाले पर नाहक गुस्सा किया। निशीथ और प्रदोष जिनको रात में और संध्या के सिवा और वक्त नहीं दिखाई देता था अब दिन में भी देखने लगे। उनकी खुशी का ठिकाना न रहा। तब तीनों अपने घोड़ों को ले आने के लिए चले। तीनों आखिर उस पेड़ के पास पहुँचे जिससे उनके घोड़े पहले बँधे हुए थे। उदय ने अपनी जेब से काली बुकनी निकाल कर उस जगह छिड़क दी। तुरंत दोनों घोड़े दिखाई देने लगे। वहाँ से उन्होंने खोह में जाकर तीसरा घोड़ा भी ले लिया और दाढ़ी वाले के घर लौट आए। उन्हें देख कर दाढ़ी वाले ने कहा—'मैंने जो वादा किया था वह पूरा हो गया न! अब तुम लोग जा सकते हो। हाँ, अपने वादे के अनुसार माला खोह में छोड़ते जाना। लेकिन तुम लोगों ने अपना वादा पूरा नहीं किया तो....' वह और भी कुछ कहने जा रहा था कि निशीथ ने टोक कर पूछा—'पहले हमें यह बताओ कि तुम

असल में कौन हो ? हम तुम्हारा सच्चा परिचय पाए बिना यहाँ से नहीं जा सकते।' तब दाढ़ी वाले ने कहा—'मैं यह तो तुम्हें नहीं बता सकता। क्योंकि यह एक बड़ा रहस्य है। अगर मैं तुम्हें यह रहस्य बताऊँगा तो मेरा सिर सौ टूक हो जाएगा और मैं मर जाऊँगा। यह किसी का शाप है। इसलिए मुझे माफ करो।' तब तीनों भाइयों ने उसकी बात मान ली और परिचय के लिए विशेष आग्रह नहीं किया। वे अपने घोड़ों पर सवार होकर वहाँ से निकले। जाते समय उदय ने दाढ़ी वाले से कहा—'हमारी और एक इच्छा है। क्या तुम उसे पूरी करोगे ? हम तुम्हारी माला यहीं छोड़ जाएँगे। लेकिन थैला, तौलिया वगैरह अपने साथ लेते जाएँगे।' बौने ने उनकी बात मान ली। तीनों भाई वहाँ से चल कर जाते जाते दाढ़ी वाले की बताई हुई खोह के नजदीक पहुँचे। वादे के अनुसार उदय ने गले की माला उतार कर खोह में धर दी। माला गले से निकालते ही उदय का पहले का सा रूप हो गया। अपने घोड़ों पर

सवार होकर तीनों आगे बढ़ चले। थोड़ी दूर जाने के बाद वे एक घने जंगल में पहुँचे। तब तक अँधेरा हो गया था। रात को वे जंगल में कहाँ ठहरते ? वे सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिए। इतने में तीन शेर कहीं से गरजते हुए आए और उन पर टूट पड़े। इस तरह अचानक टूट पड़ने के कारण निशीथ और प्रदोष कुछ क्षण तक स्तब्ध रह गए। लेकिन उदय ने अपनी जेब से सफेद बुकनी निकाल कर अपने दोनों भाइयों और उनके घोड़ों पर भी छिड़क दी। फिर थोड़ी सी बुकनी अपने ऊपर

छिड़क की। तुरंत सभी गायब हो गए। शेर जब गरजते हुए टूट पड़े तो वहाँ क्या था? कुछ नहीं! शेर बड़ी आशा लगाए आए थे कि उनको पेट भरने का मौका मिला। लेकिन उन्हें निराश होकर जाना पड़ा। थोड़ी देर में वे वहाँ से चले गए। शेरों के चले जाने के बाद भी भाइयों ने अपना मामूली रूप धारण नहीं किया। क्योंकि उन्होंने सोचा कि जंगल में रात के वक्त खतरा ज्यादा रहता है। इसलिए सबेरे तक वे उसी अदृश्य रूप में ही रहे। आखिर सबेरा हुआ। उदय ने अपनी जेब से काली बुकनी निकाल कर अपने भाइयों और अपने ऊपर छिड़क ली। तुरंत तीनों के असली रूप हो गए। तब तीनों अपने घोड़ों पर सवार होकर थोड़ी देर में हवा से बातें करने लगे। दाढ़ी वाले की कृपा से अब उनकी दृष्टि में कोई दोष नहीं रह गया था। उस ओर से अब उन्हें कोई चिंता न थी। इस तरह कुछ दूर जाने के बाद उन्हें एक निर्जन प्रदेश में एक महल दिखाई दिया। 'देखें! हम तीनों में से कौन पहले उस महल के नज़दीक पहुँचता है!' यह कह कर तीनों ने घोड़ों को ऐंड़ लगाई। उदय कुछ आगे निकल गया। निशीथ और प्रदोष के बीच कोई अंतर न था। दोनों पीछे थोड़ी दूर पर आ रहे थे। अचानक उन्होंने देखा कि उनके आगे जाने वाला उदय न जाने कैसे, अदृश्य हो गया।

[उदय क्या हो गया? क्या उस महल में और उसके गायब हो जाने में कोई ताल्लुक था? तीनों भाई फिर मिलेंगे कि नहीं? आदि प्रश्नों के उत्तर अगले अंक में पाइए।]

गर्वीला सियार

रामपुर में एक घर के चबूतरे पर बैठा हुआ रामू नाम का लड़का अपनी तीसरे दर्जे की पोथी निकाल कर पढ़ रहा था। वह जो सबक पढ़ रहा था वह सियार पर था। रामू जोर से पढ़ रहा था—'सियार बड़ा चालबाज होता है।' इतने में नजदीक के खेत में से गुजरते हुए एक सियार ने यह वाक्य सुन लिया। उसकी चालाकी के बारे में किताबों में भी लिखा गया है; यह जान कर वह सियार गर्व से फूल उठा। हाँ, तो उसी समय उस ओर से एक केंकड़ा भी आ रहा था। जानते ही हो, केंकड़ा तो टेढ़ी टेढ़ी चलता है। इस केंकड़े ने सियार को देख कर कहा—'सियार मामू! बात क्या है! बहुत खुश दिखाई देते हो!' 'अरे केंकड़े! क्या सुनाऊँ! वह लड़का जो चबूतरे पर बैठा पढ़ रहा है न! क्या तुमने उसको पढ़ते नहीं सुना! वह मेरे ही बारे में सबक पढ़ रहा था! देखो न, मनुष्य ने अपनी किताबों में भी लिख लिया है कि मैं बड़ा चालाक जानवर हूँ।' यह कह कर सियार ने गर्व के साथ एक बार अपनी दुम फटकारी। 'मैंने इसे बड़े प्रेम से 'सियार मामू' कह कर पुकारा! लेकिन इसने मुझे पुकारा 'अरे केंकड़े!' कह कर! क्या मनुष्य की प्रशंसा सुन कर इसे इतना गर्व हो गया है! मैं इसका सारा गर्व छुड़ाऊँगा!' केंकड़े ने अपने मन में सोचा और सियार से कहा—'सियार मामू! चाल-बाज के माने तो हुआ कपटी! धोखे-बाज! यह तो निंदा है! यह प्रशंसा कैसे हो गई!' यह सुन कर सियार को गुस्सा आ गया। उसने कहा—'केंकड़े! तू मुझे देख कर कितना जलता है! गलत अर्थ लगा कर क्या तू मेरी प्रशंसा को निंदा बनाना चाहता है!' 'मामू, तुम बड़े होशियार हो, इसमें कोई शक

नहीं। लेकिन दुनिया में कुछ लोग ऐसे भी हैं जो तुमसे भी होशियार हैं।' केंकड़े ने मुस्कुराते हुए कहा। यह सुन कर सियार का गुस्सा और भी बढ़ गया और उसने कहा—'क्या कहा तूने! क्या दुनियाँ में मुझसे भी होशियार लोग हैं!' 'क्यों नहीं हैं! मैं खुद तुमसे होशियार हूँ।' केंकड़े ने जवाब दिया। 'अरे! तू तो सीधा चल भी नहीं सकता। टेढ़ा-मेढ़ा चलता है। तू मुझसे ज्यादा होशियार क्या बनेगा!' सियार ने कहा। तब केंकड़े ने अपनी हँसी दबा कर, सियार की बात काट कर कहा—'मामू! अगर हम सीधे चलने लगें तो फिर कौन हमारी बराबरी कर सकेगा!' 'शेखी मत बघारो।' सियार ने कहा। 'मैं शेखी नहीं बघारता। अगर तुम चाहो तो बाजी लगाओ। तब मालूम हो जाएगा कि हम दोनों में कौन तेज चलता है!' केंकड़े ने कहा। उसकी ये बातें सुन कर सियार को बड़ा अचरज हुआ। फिर भी उसने कहा—'अच्छा! चलो, हम दोनों खेत के इस पार से उस पार तक दौड़ लगाएँ। देखें, कौन जीतता है!' केंकड़े ने उसकी चुनौती मंजूर कर ली। दोनों दौड़ने के लिये तैयार हो गए। 'हम दोनों को एक ही लकीर पर खड़ा हो जाना चाहिये।' सियार ने कहा। 'कोई जरूरत नहीं। मैं तुमसे तेज दौड़ता हूँ। इसलिए मैं जरा पीछे भी खड़ा हो गया तो नुकसान न होगा।' यह कह कर केंकड़ा सियार के पीछे खड़ा हो गया। 'हम दोनों में कौन जीता!—इसका निश्चय कैसे होगा! इसके लिए एक पंच चाहिये न!' सियार ने कहा। उसी समय एक कौआ उधर से उड़ता आया। केंकड़े ने उसे पुकार कर कहा—'कौआ काका! जरा इस खेत के उस पार जाकर बैठ जाओ और

हम दोनों की दौड़ देखो। हम दोनों में कौन यहाँ पहले पहुँचता है, यह तुम्हें बताना होगा।' कौए ने उसकी बात मान ली और खेत के उस पार जाकर बैठ गया। सियार ने एक, दो, तीन गिन कर दौड़ लगाई। लेकिन केंकड़ा खड़ा रहा और सियार के तीन कहते ही उसने लपक कर उसकी पूँछ पकड़ ली। इस तरह उसे दौड़ने की जरूरत ही न रही। सियार पल भर में कौए के पास पहुँच कर पीछे मुड़ा और पुकारने लगा—'अरे केंकड़े! कहाँ है तू! कितनी दूर रह गया!' इस तरह खिल्ली उड़ाते हुए वह देखने चला कि केंकड़ा कहाँ है! इतने में केंकड़ा उसकी पूँछ छोड़ कर उछला और एक सलाम बजा कर कौए के पास जा खड़ा हुआ। उसने सियार से कहा—'सियार मामू! पीछे क्या देख रहे हो! मैं तो तुमसे पहले ही यहाँ पहुँच गया और कब से तुम्हारी राह देख रहा हूँ।' सियार अचरज के साथ कौए की तरफ मुड़ा तो केंकड़े को देख कर हक्का-बक्का रह गया। वह क्या कर सकता था! आखिर उसने कहा—'केंकड़े भाई! तुम्हीं जीत गये।' 'हाँ, दूसरों की

खातिर करना सीख लो। घमण्ड में आकर यह न सोचो कि मुझसे बड़ा कोई है ही नहीं। दुनियाँ में घमण्ड किसी के काम नहीं आता।' केंकड़े ने सियार को उपदेश दिया। सियार शर्मिन्दा हुआ और दुम दबा कर वहाँ से खिसक गया। कौए ने केंकड़े से सारी कहानी सुन ली और कहा—'हाँ, भैया! इसी सियार ने एक बार गाना सुनने के बहाने मुझे चकमा दिया और मेरा गोश्त का टुकड़ा उठा कर भाग गया। तुमने इसे अच्छा सबक सिखाया; नहीं तो इसके घमण्ड का कोई ठिकाना न था।' यह कह कर वह भी अपनी राह चला गया।
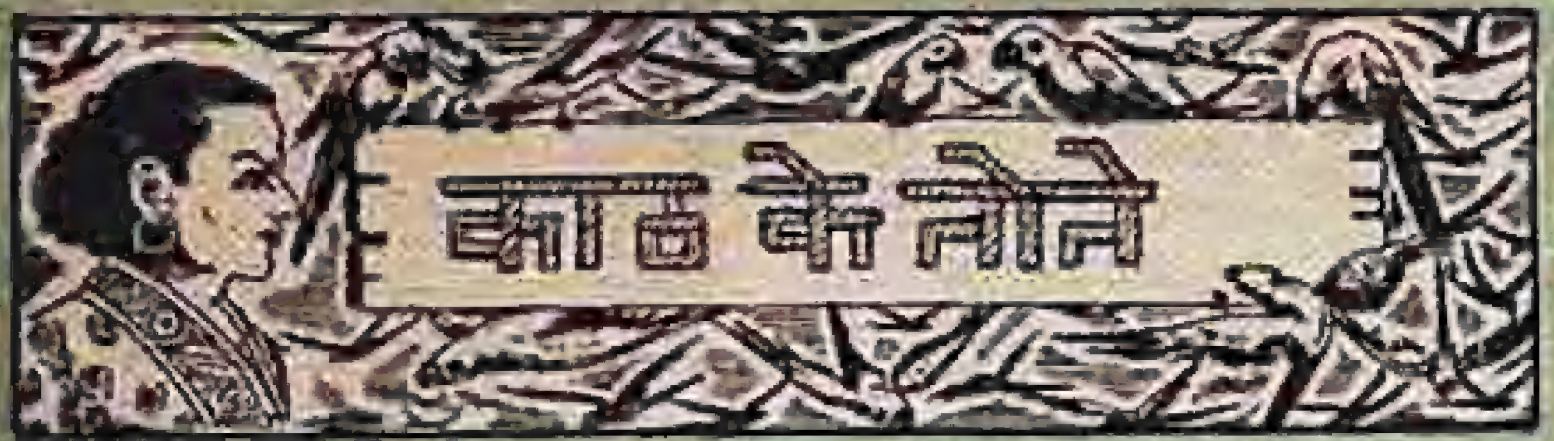
सात समुद्र के पार एक द्वीप था। उस द्वीप के बीचों-बीच एक किला बना हुआ था। उस किले की बगल में एक बगीचा था और उस बगीचे के बीच में था एक सुन्दर महल। महल के चारों ओर सात खाइयाँ थीं जिनको पार करना मनुष्य-मात्र के लिए सम्भव नहीं था। उस महल में रहती थी राजा दिलीपसिंह की लड़की। वह बहुत सुंदरी थी। उसने एक प्रण कर लिया था कि जो सात समुंदर और सातों खाइयाँ पार कर उसके महल में आएगा, उसी के साथ वह ब्याह करेगी। उसके रूप से लुब्ध होकर देश-विदेश के कितने ही राजकुमार आए। लेकिन कोई उन खाइयों को पार नहीं कर सके। उनमें से एक राजकुमार का नाम था 'कलाधर'। वह कुन्तल देश का रहने वाला था। वह काठ की मूर्तियाँ बनाने में बड़ा निपुण था। कलाधर एक बड़े जहाज पर चढ़ कर रवाना हुआ। लेकिन बीच में तूफान उठा तो राजकुमार ने अपने जहाज को एक द्वीप के किनारे लगा दिया। जहाज पर बैठे-बैठे जब उसका जी ऊबने लगा तो वह काठ के तोते बनाने लगा। उसने करीब सौ तोते बनाए और उन्हें सुंदर रंगों में रंग दिया। इतने में तूफान छूट गया। राजकुमार अपने सौ तोतों को लेकर जहाज पर चढ़ा और लंगर उठा लिया। लहरों पर झूलता जहाज आगे बढ़ा। उसी समय ब्रह्मा जी आकाश-मार्ग से कहीं जा रहे थे। समुंदर के बीच जहाज पर अकेले सफर करते हुए कलाधर को देख कर उन्हें बड़ा अचरज हुआ। उसके पास काठ के सौ तोतों को देख कर उन्होंने सोचा—'अहा! कितने सुंदर तोते बनाए हैं! देखने से मालूम होता है कि अभी

फूलचंद

चींटी और पतङ्ग

काशी प्रसाद श्रीवास्तव 'कुसुम'

*

भूख से होकर के हैरान
देख कर चींटी का खलिहान,
पतंगे ने चींटी से कहा—
'न खाने को मुझको कुछ रहा।
कृपा कर दे दो थोड़ा अन्न!
नहीं तो हूँ मैं मरणासन्न।'
तुरत चींटी ने उत्तर दिया—
'काम क्या अब तक तुमने किया?'
'रहा गरमी में गाकर मस्त
घास पर लगा लगा कर गश्त॥
काम तो भी यह है बारीक।
सभी करते मेरी तारीफ।'
कहा चींटी ने—'प्यारे मित्र!
तुम्हारी लगती बात विचित्र।
फिरे गरमी भर गाते आप।
काट दें वर्षा नाच कर आप।'

चन्दामामा पहेली का जवाब :

Controlling Editor : SRI CHAKRAPANI
Printed and Published by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press, Madras-1

Chandamama, September '51 Photo by Pranlal K. Patel

हूं! मैं भी दौडूंगी!